सीरत
इमाम
अहमद रज़ा
रहमतुल्लाह तआला अलैहि
अल्लामा अब्दुल हकीम अख़्तर शाह जहांपुरी
www.jannatikaun.com

# सीरत इमाम अहमद रज़ा

रहमतुल्लाह तआला अलैहि

मुसन्निफ़

अल्लामा अब्दुल हकीम ख़ां अख़्तर शाहजहांपुरी

# हयाते मुजद्दिद

**उम्र हा दर काबा व बुतख़ाना मी नालद हयात**
**ताज़ बज़्मे इश्क़ यक दानाए राज़ आयद बरूं**

इन्क़िलाब १८५७ ई० से एक साल क़ब्ल, १०/शव्वाल १२७२ हिजरी/१४/जून १८५६ को यह इस्लामी इन्क़िलाब का बेबाक नक़ीब, मुहाफ़िज़े इस्लाम, फ़क़ीहे आज़म, नाबग़ए अस्र, यगानए रोज़गार, सरमायए इफ़तिख़ार, मुसलमानों का यावर, उलमाए अमाइद की आंखों की ठण्डक, अस्लाफ़ की मुक़द्दस यादगार, सुन्नीयत का अलमबर्दार और मुजद्दिदे दीन व मिल्लत बरैली शहर के मुहल्ला सौदाग्रान में मौलाना नक़ी अली ख़ान (अलमुतवफ़्फ़ी १२९७ हिजरी/ १८८० ई०) इब्ने मौलाना रज़ा अली (अलमुतवफ़्फ़ा १२८२ हिजरी /१८६५ ई०) के इल्मी घराने में पैदा हुआ। पैदाईशी नाम "मुहम्मद" तारीख़ी "अल मुख़्तार" रखा गया। जद्दे अमजद मौलाना रज़ा अली ख़ान रहमतुल्लाह अलैहि आप को अहमद रज़ा ख़ां कहा करते थे लेकिन सरवरे कौन व मकां सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का यह सच्चा ग़ुलाम फ़ख़रिया अपने इस नाम से पहले अब्दुल मुस्तफ़ा का इज़ाफ़ा करके यूं लिखा करता था : "अब्दुल मुस्तफ़ा अहमद रज़ा ख़ां" इसी लिए तहदीसे नेमत के तौर पर कहा है।

**ख़ौफ़ न रख रज़ा ज़रा, तू तो है अब्दे मुस्तफ़ा**
**तेरे लिए अमान है, तेरे लिए अमान है**

अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी कुद्देस सिर्रहू की हयाते मुबारका और सीरते मुक़द्देसा का ख़ाका देखना हो, तो उस आयते करीमा के मआनी व मतालिब में ग़ौर कर लेना काफ़ी है जो ख़ामए कुदरत ने अपने इस बन्दे की तारीख़े विलादत के लिए उसकी ज़बान पर जारी फ़रमाई थी। यह इल्हामी तारीख़ यह है।

**ऊलाइ क क त ब फ़ी क़ुलूबिहिमुल ईमा न व अय्यद हुम बिरूहिम्मिन्हु।**

आप ने चार साल की उम्र में क़ुरआने पाक नाज़िरा पढ़ लिया था,

छः साल की उम्र में मिम्बर पर बैठ कर मजमए आम के सामने मीलाद शरीफ़ पढ़ा, आठ साल के हुए तो "हिदायतुन्नहो" की अरबी में शरह लिख दी और तेरह साल दस माह की उम्र में १४ शाबान १२८६ हिजरी/१८७०ई को तमाम उलूमे दीनिया अक़लीया व नक़लीया की तकमील करके सनदे फ़राग़ हासिल की। उसी रोज़ रज़ाअत के बारे में एक इस्तिफ़ता का जवाब लिख कर अपने वालिदे मुहतरम, मौलाना नक़ी अली ख़ान बरैलवी रहमतुल्लाह अलैहि की ख़िदमत में बग़र्ज़े इस्लाह पेश किया। जवाब बिल्कुल दुरुस्त था। वालिद ने उसी रोज़ फ़तवा नवेसी की ज़िम्मादारी आप के सुपुर्द कर दी और ख़ुद इस बारे गिरां से सुबुकदोश होकर बाक़ी उम्र यादे इलाही में बसर करने का तहय्या कर लिया।

आप ने इब्तदाई तालीम मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर बेग़ से पाई, अकसर उलूमे दीनिया, अक़लीया व नक़लीया अपने वालिदे माजिद नक़ी अली ख़ां रहमतुल्लाह अलैहि (अलमुतवफ़्फ़ा १२६७हि०/१८८०ई०) से हासिल किए। बाज़ उलूम की तकमील मौलाना अब्दुल अली रामपूरी, मुर्शिदे गिरामी शाह आले रसूल मारेहरवी (अलमुतवफ़्फ़ा १२६७हि०/१८८०) और वाह अबुल हुसैन नूरी मारेहवी (अलमुतवफ़्फ़ा १३२४ हि० १६०६ ई०) से की। १२६१/१८७५ में आप की शादी ख़ाना आबादी हुई। यह मुबारक तक़रीब शरई तरीक़े पर इन्तिहाई सादगी से अंजाम पाई और कोई ला यानी रस्म इस मौक़ा पर तरफ़ैन से अदा न की गई।

१२६४हि०/१८७८ई० में आला हज़रत अपने वालिदे माजिद के हमराह, मारेहरा शरीफ हाज़िर हुए और सैयद आले रसूल मारेहरवी रहमतुल्लाह अलैहि (अलमुतवफ़्फ़ा, १२६ हि./१८८०ई०) के दस्ते हक़ परस्त पर सिलसिलए आलिया क़ादरीया बरकातिया में बैअत हुए। साथ ही चारों सलासिल की इजाज़त और ख़िरक़ए ख़िलाफ़त से भी नवाज़े गए। अहले नज़र तो यहां तक कहते हैं कि हज़रत पीर व मुर्शिद इस बैअत के चन्द रोज़ पहले से यूं नज़र आते थे जैसे किसी का इन्तिज़ार कर रहे हों और जब यह दोनों हज़रात हाज़िरे ख़िदमत हुए तो बश्शाश होकर

फ़रमाया। तशरीफ़ लाइए, आप का तो बड़ा इन्तिज़ार था।'' (वल्लाहु आलम बिस्सवाब)। मुर्शिद गिरामी के बारे में मन्कूल है कि आपने इस मौक़ा पर इन्तिहाई मसर्रत का इज़्हार फ़रमाया और उसकी वज़ाहत बई अल्फ़ाज़ फ़रमाई।

''आज वह फ़िक्र मेरे दिल से दूर हो गई क्योंकि जब अल्लाह तआला पूछेगा कि ऐ आले रसूल! तू मेरे लिए क्या लाया है? तो मैं अर्ज़ करूंगा कि इलाही ! मैं तेरे लिए अहमद रज़ा लाया हूं।

इमाम अहमद रज़ा बरैलवी ने १२९५ हि./१८७८ ई० में अपने वालिदैन करीमैन के हमराह फ़रीज़ए हज अदा किया और मदनी सरकार, कौनैन के ताजदार, अहमदे मुख़्तार सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की बारगाहे बेकस पनाह में हाज़िरी की सआदत हासिल की, जिससे दिलों को नूर, आंखों को सुरूर और ईमान को जिला मिलती है। सबका देखना हक़ीक़त में एक जैसा नहीं होता। नबी आख़िरूज़्ज़मां सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम को सहाबए किराम ने देखा और झुटलाने वालों ने भी, हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ ने देखा और अबू जेहल ने भी, क्या उन सब का देखना एक जैसा था ? हरगिज़ नहीं। हक़ीक़त यह है कि जिसने आप को जैसा जाना और माना, बस वैसा ही देखा। आप एक शफ़्फ़ाफ़ तरीन आइना हैं। जैसा किसी का आप के मुताल्लिक़ अक़ीदा है वैसे ही आप उसे इस आइने में नज़र आ जाते हैं। इस आरिफ़ कामिल और अहले नज़र ने आपको पहचान लिया था और मुसलमानों को यही दर्स देते रहे थे कि वह भी इसी नज़र से मौलाए काईनात सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के रौज़ए अनवर को देखा करें यानीः।

**हाजियो आओ ! शहंशाह का रौज़ा देखो**
**काबा तो देख चुके, काबे का काबा देखा**

इस मौक़ा पर एक अजीब वाक़िआ ज़ुहूर पज़ीर हुआ, जिसका मौलवी रहमान अली मरहूम ने यूं तज़किरा किया है।

''एक दिन नमाज़े मग़्रिब मक़ामे इब्राहीम अलैहिस्सलाम में अदा की। नमाज़ के बाद इमाम शाफ़ईया हुसैन बिन सालेह जमलुल्लैल बग़ैर

किसी साबिक़ा तआर्रुफ़ के इनका हाथ पकड़ कर इनको अपने घर ले गए, देर तक इनकी पेशानी को थामे रहे और फ़रमाया। **इन्नी लअजिदु नूरल्लाहे मिन हाज़ल जबीन**(बेशक मैं इस पेशानी से अल्लाह का नूर पाता हूं) उसके बाद सिहाहे सित्ता की सनद और सिलसिलए क़ादरिया की इजाज़त अपने दस्ते ख़ास से मरहमत फ़रमाई और इरशाद फ़रमाया कि तुम्हारा नाम ज़ियाउद्दीन अहमद है।

सनदे मज़कूर में इमाम बुख़ारी (रहमतुल्लाह अलैहि) तक ग्यारह वास्ते हैं।

इसी मौक़ा के मुताल्लिक़ मौसूफ़ ने मज़ीद यूं भी लिखा है।

मक्का मुअज़्ज़मा में शैख़ जमलुल्लैल मौसूफ़ के ईमा से रिसाला जौहरे मज़ीया की शरह–

जो मनासिके हज में शाफ़ई मज़हब के मुताबिक़ है, दो दिन में लिखी। यह रिसाला शैख़ हुसैन बिन सालेह की तस्नीफ़ है। मौलवी अहमद रज़ा खां ने इस (शरह) का नाम **अन नय्यरतुल वज़ीया फ़ी शरहिल जौहरतिल मज़ीया** लिख कर शैख़ की ख़िदमत में ले गए। शैख़ ने इनके हक़ में तहसीन व आफ़रीन फ़रमाई...................................

रात को यानी नमाज़े इशा के बाद मौलवी अहमद रज़ा ख़ां मस्जिद हनीफ़ में तन्हा ठहर गए और वहां मग़फ़िरत की बशारत पाई। अल्लाह इनको सलामत रखे।

१३२३ हि./ १९०५ ई० में आप दूसरी दफ़ा हज्जे बैतुल्लाह और ज़ियारते रौज़ए मुतह्हरा की सआदत से बहरा मन्द हुए। हरमैन शरीफ़ैन की यह हाज़िरी ग़ैबी थी क्योंकि इस में हक़ व बातिल का तारीख़ी फ़ैसला होना था। यह हाज़िरी इस लिए मख़सूस थी कि जिन लुसूसे दीन की आप तरदीद करते रहे थे और वह किसी तरह बाज़ न आए, तो मुसलमानों को उनके शर से महफ़ूज़ रखने यानी ख़ैर ख़्वाही इस्लाम व मुसलिमीन की ख़ातिर १३२० ई० में अल मोतमदुल मुस्तनद के अन्दर हुक्मे शरअ बयान करते हुए उन उलमाए सूअ की तकफ़ीर का शरई फ़रीज़ा अदा किया था, क़स्सामे अज़ल को यह मंज़ूर था कि

आप के इस फ़तवे की तस्दीक़ व ताईद दरबारे रिसालत यानी रियारे रसूल से हो जाये। चुनांचे उलमाए हरमैन शरीफ़ैन ने आपके फ़तवे की तस्दीक़ व ताईद की, उसके मुतअल्लिक़ तक़रीज़ें लिखीं, जिन के मजमूये का तारीख़ी नाम **होसामुल हरमैन अला मंहरिल कुफ़्रे वल मुबीन है।**

इस मुबारक मौक़ा पर **''अद्दोलतुल मक्कीया बिल माद्दतिल ग़ैबीया''** जैसी तालीफ़ मसनय शहूद पर जलवा गर हुई। हिन्दी और नज्दी वहाबियों ने शरीफ़े मक्का के दरबार में मसला इल्मे ग़ैब पेश किया हुआ था। मुफ़्तीए अहनाफ़ शैख़ सालेह कमाल मक्की रहमतुल्लाह अलैहि (अल मुतवफ़्फ़ा १३२५ हि./१६०७ ई०) की ख़िदमत में वहाबिया की जानिब से पांच सवाल पेश हो चुके थे। मुफ़्तीए अहनाफ़ का दर्जा उन दिनों शरीफ़ के बाद दूसरा शुमार होता था। मौसूफ़ ने वह सवाल आला हज़रत अलैहिर्रहमा की ख़िदमत में पेश किए। आप ने बुख़ार की हालत में मुख़्तलिफ़ नशिस्तों के अन्दर साढ़े आठ घन्टों में " अद्दौलतुल मक्कीया" के नाम से बग़ैर किताबों की मदद के वह जवाब लिखा कि उलमाए मक्का अंगुश्त बदन्दां हो गए और मुनकिरीने शाने रिसालत का तो ऐसा मुंह बन्द हुआ कि साकित व मबहूत होकर रह गए। यह माया नाज़ इल्मी शहकार और ताईदे ईज़्दी व नज़रे इनायते मुस्तफ़वी का ज़िन्दा सुबूत सत्तर साल से ला–जवाब है और क़ियामत तक ला–जवाब ही रहेगा। क्योंकि" **अल इस्लामु यालू वला युला।** इस्लाम ग़ालिब ही रहता है यह मग़लूब होने के लिए नहीं है।

यह रिसाला शरीफ़े मक्का के दरबार में, मुनकिरीन व मुआनेदीन के रूबरू, मौलाना शैख़ सालेह कमाल क़ाज़ी मक्का मुकर्रमा ने पढ़कर सुनाया। उस वक़्त मुनकिरीने शाने रिसालत की जो रूसियाही हुई वह एक तारीख़ी वाक़िआ है। उलमाए मक्का मुकर्रमा और उनके बाद उलमाए मदीना मुनव्वरह और उनके बाद दीगर बिलाद व अमसार के उलमाए किराम व मुफ़्तियाने एज़ाम ने इस रिसाले पर धूम धाम से सालहा साल तक तक़रीज़ें लिखीं और इरसाल फ़रमाई। इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी को अज़ीम व जलील ख़िताबात से नवाज़ा और हरमैन

तय्यबैन के उलमाए किराम ने जो पूरे आलमे इस्लाम के लिए क़ाबिले ताज़ीम व लाइक़े एहतराम हैं, आप का अदीमुन्नज़ीर एज़ाज़ व इकराम किया। आप को नादिरे रोज़गार, सरमायए इफ़्तिख़ार, सर ताजुल उलमा, फ़क़ीहे आज़म, मुहक़्क़िक़े यगाना, मुहाफ़िज़े शाने रिसालत, हुज्जते इलाही की तेग़े बरां, इमाम अहले सुन्नत और मुजद्दिदे दीन व मिल्लत क़रार दिया। आप से सनदें और इजाज़तें लीं।

यही वह मुबारक मौक़ा था जब रिसालए मुबारका किफ़लुल फ़क़ीहिल फ़ाहिम फ़ी अहकामे क़िरतासिद्दराहिम" की तस्नीफ़ अमल में आई। नोट: उन दिनों एक नई ईजाद थी आलमे इस्लाम के उलमाए किराम व मुफ़्तियाने एज़ाम इस के बारे में तसल्ली बख़्श शरई हुक्म मालूम न कर पाए थे। इमाम अहमद रज़ा खां बरैलवी की मुहक़्क़िक़ाना अज़मत और इल्मी वुसअत उलमाए हरमैन और खुसूसन उलमाए मक्का मुकर्रमा पर वाज़ेह हो चुकी थी। मौक़ा ग़नीमत जान कर मक्का मुअज़्ज़मा के दो आलिमों ने नोट के मुतअल्लिक़ बारह सवाल आप की ख़िदमत में पेश कर दिए। उन सवालों के जो मुहक़्क़िक़ाना जवाबात तहरीर किए गए वह एक रिसाले की सूरत में किफ़लुल फ़क़ीह के नाम से जमा किए गए। उलमाए हरमैन ने इस रिसाले की मुतअद्दिद नक़लें कीं और मुफ़्तियाने एज़ाम ने अपने पास रखीं। नोट का सही हुक्मे शरई मालूम करके पूरे आलमे इस्लाम को इस परेशानी से नजात देने वाला सिर्फ़ इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी है, आप से पहले दुनिया के किसी आलिम से नोट का सही हुक्म और इस की शरई हैसियत बयान नहीं की जा सकती थी। इस सिलसिले में दीगर उलमा के १३२४ हि./१९०६ ई० से पहले के फ़तवे देख कर हमारे बयान की खुद तस्दीक़ की जा सकती है।

इमाम अहमद रज़ा खां बरैलवी सच्चे आशिक़े रसूल और इशके रसूले हाशमी की एक पिघलती हुई शमा थे १४–शाबान १२८६ हि./ १८७० ई० से २५ सफ़र १३४० हि. / १९२१ ई० तक निस्फ़ सदी से ज़्यादा अरसा आप मुसलमानाने आलम को मोहब्बते रसूल के जाम पिलाते रहे क्योंकि इस्लाम की जान और रूहे ईमान यही है। इमाम अहमद रज़ा ख़ां

बरैलवी नुरूल्लाहु मरकदुहू का यह मिशन उनकी तसानीफ़ के ज़रिए आज भी जारी है। उनकी क़ल्मी निगारिशात क़यामत तक मुसलमानों को मस्त जामे बादए उल्फ़त और साक़िए कौसर व तस्नीम का वाला व शैदा बनाती रहेंगी। आला हज़रत का आशिके रसूल होना उनके मुख़ालिफ़ीन के नज़दीक भी मुसल्लम है। एक मौक़ा पर आप ने तहदीसे नेमत के तौर पर फ़रमाया था। ख़ुदा की क़सम, अगर मेरे दिल को चीर कर दो टुकड़े कर दो। तो एक पर **ला इलाहा इल्लल्लाह** और दूसरे पर **मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** लिखा हुआ पाओगे। इसी लिए आप बारगाहे रिसालत में यूं अपनी तमन्ना पेश किया करते थे।

**करूं तेरे नाम पे जां फ़िदा**
**न यह एक जां , दो जहां फ़िदा**
**दो जहां से भी नहीं जी भरा**
**करूं क्या करोड़ों जहां नहीं**

इस नाबग़ए अस्र और अदीमुन्नज़ीर मुसन्निफ़ ने तक़रीबन पचास उलूम व फ़ुनून पर मुशतमिल तसानीफ़ छोड़ीं, जिन का शुमार एक मुहतात अन्दाज़े के मुताबिक़ एक हज़ार के लगभग है। कसीरूत्तसानीफ़ और इतने उलूम का जामे होने के लिहाज़ से यक़ीनन आप का शुमार मिल्लते इस्लामिया की मुन्फ़रिद और मुम्ताज़ हस्तियों में है। बा:ज़ उलूम तो वह हैं जिन के मूजिद होने का शर्फ़ आप ही को हासिल है। कई ऐसे इल्म भी हैं जो आप के साथ ही दफ़न हो गए और उन में किसी कामिल का पाया जाना तो दूर की बात है, उनकी अदना मालूमात रखने वाला भी कोई नज़र नहीं आता। आप के जामिउल उलूम होने पर मुख़ालिफ़ीन व मुआनिदीन को भी नाज़ था। आप ने तफ़सीर, हदीस, फ़िक़ह, कलाम और तसव्वुफ़ वग़ैरह की डेढ़ सौ के लगभग मशहूर व मुतदाविल किताबों पर हवाशी लिखे थे। जो किसी तरह मुस्तक़िल तसानीफ़ से कम नहीं लेकिन वाए हमारी बेहिस्सी। अल्लामा इक़बाल मरहूम का दिल अकाबिर के जवाहिर पारों, इल्मी शहकारों को यूरोप की लाइब्रेलियों में देख कर सी पारह होने लग जाता था लेकिन दुनियाए इस्लाम के इस

मायए नाज़ मुहक़्क़िक़ के कितने ही इल्मी जवाहिर व ज़ख़ाइर बरैली शरीफ़ में कीड़ों की ख़ूराक बन रहे हैं। क्या यह तारीख़ी अलमीया, इल्म दोस्त हज़रात को ख़ून के आंसू न रूलाता होगा ? क्या यह मौजूदा मुसन्निफ़ीन अपनी तख़लीक़ात के ज़रिए हमें इस मुहक़्क़िके यगाना की तहक़ीक़ात से बेनियाज़ कर सकते हैं ? इस सिलसिले में उलमाए अहले सुन्नत का जवाब ख़्वाह कुछ भी हो, लेकिन इस नाचीज़ का सवाल अल्लामा इक़बाल मरहूम के लफ़्ज़ों में कुछ इस तरह है।

**हू बहू खींचेगा लेकिन इश्क़ का तस्वीर कौन**
**उठ गया नावक फ़गन मारे गा दिल पर तीर कौन**

फ़ाज़िले बरैलवी कुद्देस सिर्रहू एक बुलन्द पाया मुफ़स्सिर, मायए नाज़ मुहद्दिस, नादिरे रोज़गार मुतकल्लिम और अदीमुन्नज़ीर फ़क़ीह थे। इस पर तुर्रह यह कि कितने ही दीगर उलूम व फ़ुनून में भी आप को दरजए इमामत हासिल था लेकिन सैयदना इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु (अलमुतवफ़्फ़ १५० हि.) के इस सच्चे वारिस ने भी इमामुल मुसलिमीन की तरह फ़िक़ह को अपना खुसूसी मैदान क़रार दिया था। यही वजह है कि फ़तावा रज़वीया शरीफ़ आप का मायए नाज़ इल्मी शहकार है। इस का पूरा नाम भी इस फ़ना फ़िर्रसूल हस्ती ने वही तजवीज़ किया जो हक़ीक़त का आईनादार है यानी" **अल अता या अन्नबवीया फ़ी फ़तावर्रज़वीया।**" यह बारह जिल्दों पर मुशतमिल है और हर जिल्द जहाज़ी साइज़ के तक़रीबन एक हज़ार सफ़हात पर फैली हुई है। बाज़ फ़तवे तहक़ीक़ व तदक़ीक़ के इस आला मक़ाम पर फ़ाइज़ हैं कि आप के वह मुआसिर जिन्हें फ़क़ाहत में हर्फ़े आख़िर समझा जाता था, जब इस इमामे अहले सुन्नत के फ़तवे उन हज़रात की नज़रों से गुज़रे तो फ़ाज़िले बरैलवी अलैहिर्रहमा के मुक़ाबले में उन्होंने ख़ुद को तिफ़ले मकतब शुमार किया और आप से कस्बे फ़ैज़ को ग़नीमत जाना। बाज़ मसाइल पर दादे तहक़ीक़ देते हुए जब आप ने बारह सौ साला फ़िक़ही ज़ख़ीरों को खंगाल डाला, इमामुल अइम्मा कुद्देस सिर्रहु से लेकर अल्लामा शामी अलैहिर्रहमा तक तहक़ीक़ को

पहुंचाया, हर दौर में उसे जिन लफ़्ज़ों में बयान किया गया, किसी से कोई कमी या बेशी हुई तो उसका ज़िक्र, साथ ही वजूहात कि ऐसा क्यों हुआ? कौन सा मुकिफ़ अक़रब इलल हक़ है और किन दलाइल के तहत ? ग़र्ज़ ये कि इस अन्दाज़ से मैदाने फ़क़ाहत में दादे तहक़ीक़ देते चले गए कि दुनियाए इस्लाम के मायए नाज़ इल्मी फ़र्ज़न्दों को वरतए हैरत में डाल दिया और आसमाने फ़क़ाहत के शम्स व क़मर समझे जाने वाले हज़रात आप की तहक़ीक़ाते जलीला को देख कर अंगुशत बदन्दां ही रह जाते थे। इसी लिए मक्का मुकर्रमा के जलीलुल क़द्र आलिमे दीन, मौलाना सैयद इस्माईल बिन सैयद ख़लील रहमतुल्लाह अलैहिमा (अलमुतवफ़्फ़ १३३८ हि./१९१९ ई०) ने फ़रमाया था और बजा फ़रमाया था कि अगर इमाम अबू हनीफ़ा इस हस्ती को देखते तो अपने अस्हाब में शामिल फ़रमा लेते। आप से इख़तिलाफ़ रखने वाले तो बेशुमार हैं। लेकिन शायद ऐसा एक भी मुआनिदे अहले इल्म में से न मिल सके जो आप की अदीमुन्नज़ीर फ़क़ाहत का मुनकिर हो। इन हक़ाइक़ के पेशे नज़र बे इख़्तियार कहना पड़ जाता है कि।

**है फ़तावा रज़वीया तेरे क़लम का शाहकार**
**सर बसर फ़ज़्ले ख़ुदा, नबवी अता, पाइन्दा बाद**

आपको दूसरा इल्मी शहकार कंज़ुल ईमान फ़ी तर्जमतिल कुरआन है। यूं तो कुरआने करीम का कितने ही उलमा ने उर्दू ज़बान में तर्जमा किया है जिन में से मौलवी महमूदुल हसन देवबन्दी (अलमुतवफ़्फ़ा १३३९ हि./ १९२० ई०) मौलवी अशरफ़ अली थानवी (अलमुतवफ़्फ़ १३६२ हि. /१९४३ ई०) मौलवी फ़तह मुहम्मद ख़ान जालन्धरी, डिप्टी नज़ीर अहमद देहलवी और जनाब अबुल आला मौदूदी के तराजिम पाक व हिन्द में आज कल बड़ी आब व ताब से शाया हो रहे हैं और इन हज़रात को कलामे इलाही की तर्जमानी के अलमबरदार मनवाने की भर पूर सई की जाती रही है लेकिन इन्साफ़ की नज़र से देखा जाए तो इन हज़रात ने अपने अपने मख़्सूस ख़्यालात को तर्जमे की आड़ में कुरआन करीम से साबित करने के इलावा और कुछ नहीं किया। मुसलमानाने अहले

सुन्नत व जमाअत को कुरआनी ख़िदमत के नाम पर अपने अपने धड़े की तरफ़ खींचने और अपना मोतक़िद बनाने की एक चिकनी चपड़ी जसारत है। हमारी दूसरी किताब मुतअल्लिक़ा कंज़ुल ईमान के तहत इन उर्दू तर्जमों की हक़ीक़त पर मुदलल्ल बहस मौजूद है। इन्साफ़ पसन्द हज़रात उस बयान को पढ़कर इन्शाअल्लाह तआला यही फ़ैसला करने पर मजबूर होंगे कि कुरआने करीम की तर्जमानी का अगर उर्दू में किसी ने हक़ अदा किया है तो वह कंज़ुल ईमान" है और बेसाख़्ता यूं पुकार उठेंगे कि :

तर्जमा कुरआन का लिखा, कंज़े ईमां कर दिया
ये मुफ़स्सिर! वाक़िफ़े रम्ज़े खुदा, पाइन्दा बाद

आप का तीसरा शहकार "हदाइक़े बख़शिश" है। यह आप का नातिया दीवान है। यानी इस सच्चे आशिक़, फ़ना फ़िर्रसूल ने अपने महबूब के औसाफ़ कलामे इलाही में देखे, उन्हें अपने लफ़्ज़ों में बयान करके अपने क़ल्बे मुज़तर को तस्कीन दी, मुसलमानों को सुकूं बख़्श, राहत अफ़्ज़ा नुस्ख़ा बताया। महबूब की सिफ़त व सना बयान करते वक़्त क़ल्ब का इज़तिराब, जिगर का सोज़, आंखों के आंसू और सीने की आहें भी अल्फ़ाज़ के जिस्म में पेवस्त करके फिर बुलबुले बाग़े मदीना बन कर चहचहाया, उसने अपने इन प्यारे प्यारे और ईमान अफ़रोज़ नग़मों से अहले इस्लाम के कुलूब को गरमाया, उन्हें साक़ीए कौसर व तसनीम का शैदाई बनाया और लुसूसे दीन के नर्ग़े से निकाल कर अपने और सारी काईनात के आक़ा व मौला, सरवरे कौनो मकां सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के दरे अक़दस पर झुकाया क्योंकि।

बमुस्तफ़ा बरसां ख़्वेश रा कि दीन हमा ऊस्त
अगर बउनर सैयदी तमाम बू लहबी यस्त

जिस वक़्त बर्रे सग़ीर पाक व हिन्द की फ़ज़ाओं में गांधी का तोती बोल रहा था और कितने ही साहिबाने जुब्बा व दस्तार भी उसके हाथों पर बैअत करके दीने मुस्तफ़वी पर आज़ादी और स्वराज को तरजीह दे रहे थे। हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद का नारा बुलन्द करके इस्लाम व कुफ़्र

और बुत शिकन व बुत परस्त का फ़र्क़ मिटाया जा रहा था,, अकबरी दौर की याद ताज़ा की जा रही थी, उस वक़्त मुत्तहिदा क़ौमीयत के फ़ितने की मुख़ालिफ़त करने वाले और दो क़ौमी नज़रिए का अलम बुलन्द रखने वाले, यही इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी थे या आपके रूफ़क़ाए कार। उन दिनों मुहम्मद अली जौहर, मुहम्मद अली जिनाह और डाक्टर इक़बाल मरहूम जैसे बेदार मग़्ज़ लीडर भी हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद की पुर ज़ोर हिमायत कर रहे थे। उस नाजुक वक़्त में हज़रत इमाम रब्बानी मुजद्दिदे आलिफ़े सानी सर हिन्दी कुद्देस सिर्रहू (अलमुतवफ़्फ़ा १०३४ हि./१६२४ ई०) की तरह दो क़ौमी नज़रिए का क़लन्दराना नारा फ़ाज़िले बरैलवी ही बुलन्द कर रहे थे और मुसलमानाने हिन्द की सियासी रहनुमाई का फ़रीज़ा अदा करके उन्हें हिन्दूओं में मुदग़म होने से बचा रहे थे। १३३६ हि./१६२० ई० में आप ने **अल मुहज्जतुल मोतमिना''** किताब लिख कर गांधवी उलमा के सारे मज़ऊमा दलाइल के तार पौद बिखेरकर गांधवीयत के ताबूत में आख़िरी कील ठोंक दी। आला हज़रत के रूफ़क़ाए कार ने भी उस मौक़ा पर क़ाबिले कद्र तसानीफ़ लिख कर मुत्तहिदा क़ौमीयत के फ़ितने को बे असर बनाने की पुर ज़ोर कोशिश की। यही हज़रत मुजद्दिदे अलफ़े सानी और इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी वाला'' दो क़ौमी नज़रिया'' है जिस की बिना पर पाकिस्तान का वजूद और क़याम अमल में आया।

इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी को इल्मे रियाज़ी में कहां तक कमाल हासिल था और यह इल्म आप ने कहां से हासिल किया था? इन सवालात के सिलसिले में एक वाक़िआ पेश करता हूं, जिस में जुमला उमूर का शाफ़ी जवाब है।

एक मर्तबा सैयद सुलैमान अशरफ़ साहब बिहारी प्रोफ़ेसर दीनियात अली गढ़ कालेज ने आला हज़रत की ख़िदमत में इस मज़मून का ख़त लिखा कि ''डाक्टर सर ज़ियाउद्दीन साहब जो इल्मे रियाज़ी में जर्मन, इंगलैण्ड वग़ैरह मालिक की डिगरियां और तमग़ा जात हासिल किए हुए हैं, अरसा से हुज़ूर की मुलाक़ात के मुशताक़ हैं, फिर चूंकि वह एक

जन्टिल मैन हैं, इस लिए आप की ख़िदमत में आते हुए एक झिझक महसूस करते हैं, लेकिन अब मेरे कहने और अपने इशतियाक़े मुलाक़ात के सबब हाज़िर होने के लिए आमादा हो चुके हैं, लिहाज़ा अगर वह पहुंचें तो उन्हें बारियाबी का मौक़ा दिया जाए।" आला हज़रत ने मौलाना को जवाब भेजा कि वह बिला तकल्लुफ़ तशरीफ़ ले आयें। चुनांचे दो चार रोज़ के बाद डाक्टर सर ज़ियाउद्दीन बरैली पहुंच कर आला हज़रत की बारगाह में हाज़िर हुए.................................नमाज़ के बाद दौराने गुफ़्तगू में आला हज़रत ने एक क़ल्मी रिसाला पेश किया, जिस को देखते ही डाक्टर साहब हैरत व इस्तेजाब में हो गए और बोले कि मैं ने इस इल्म को हासिल करने के लिए बारहा ग़ैर ममालिक के सफ़र किए मगर यह बातें कहीं भी हासिल न हुई। मैं ने तो अपने आप को इस वक़्त बिल्कुल तिफ़्ले मकतब समझ रहा हूं, मेहरबानी फ़रमा कर यह बतायें कि इस फ़न में आपका उस्ताद कौन है ? आला हज़रत ने इरशाद फ़रमाया मेरा कोई उस्ताद नहीं है। मैं ने अपने वालिद माजिद अलैहिर्रहमा से जमा, तफ़रीक़, ज़रब और तक़सीम के चार क़ायदे सिर्फ़ इस लिए सीख लिए थे कि तरके के मसाइल में उनकी ज़रूरत पड़ती है। शरह चग़मीनी शुरू की थी कि हज़रत वालिदे माजिद ने फ़रमाया कि इस में अपना वक़्त क्यों सर्फ़ करते हो ? मुस्तफ़ा प्यारे की बारगाह से यह उलूम तुम को खुद ही सिखा दिए जायेंगे।

इसी इल्मे रियाज़ी के मुतल्लिक़ एक वाक़िआ और पेशे ख़िदमत है, जिस से यह अन्दाज़ा बख़ूबी लगाया जा सकता है कि जब किसी पर हबीबे परवरदिगार, अहमदे मुख़तार सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की खुसूसी नज़रे करम हो जाए तो उसे किस किस तरह नवाज़ा और निखारा जाता है। अल्लामा ज़फ़रुद्दीन बिहारी अलैहिर्रहमा यूं रक़म तराज़ हैं।

"मौलाना मुहम्मद हुसैन साहब मेरठी बानी तिल्सिमी प्रेस बयान करते हैं कि मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़ के वाइस चान्सलर, जिन्होंने हिन्दुस्तान के अलावा यूरोप के ममालिक में तालीम पाई थी और रियाज़ी में कमाल

हासिल किया था और हिन्दुस्तान में काफ़ी शोहरत रखते थे, इत्तिफ़ाक़ से उनको रियाज़ी के किसी मसला में इश्तिबाह हुआ। हर चन्द कोशिश की मगर वह हल न हुआ। चूंकि साहबे हैसियत थे और इल्म के शाइक़, इस लिए क़स्द किया कि जर्मन जाकर उसको हल करें.......................... वाइस चानसलर साहब ने बताया कि मैं रियाज़ी का एक मसला पूछने आया हूं। आला हज़रत ने फ़रमाया। पूछिए। वाइस चान्सलर साहब ने कहा। वह ऐसी बात नहीं है जिसे मैं इतनी जल्दी अर्ज़ कर दूं। आला हज़रत ने बताया। आख़िर कुछ तो फ़रमाइए। ग़र्ज़ वाइस चान्सलर ने सवाल पेश कर दिया। आला हज़रत ने सुनते ही फ़रमाया। इसका जवाब यह है। यह सुन कर उनको हैरत हो गई और गोया आंखों से पर्दा उठ गया। बे इख़्तियार बोल उठे कि मैं सुना करता था कि इल्मे लदुन्नी भी कोई चीज़ है, आज आंख से देख लिया। मैं इस मसला के हल के लिए जर्मन जाना चाहता था कि हमारे प्रोफ़ेसर जनाब मौलाना सैयद सुलैमान अशरफ़ साहब ने मेरी रहबरी फ़रमाई।

**मेरे करीम से गर क़तरा किसी ने मांगा**
**दरिया बहा दिए हैं, दुरबे बहा दिए हैं**

इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी की फ़न्ने तकसीर में महारत का अन्दाज़ा करने की ख़ातिर यह वाक़िआ और वज़ाहत मुलाहिज़ा हो :

"आला हज़रत के शागिर्द हज़रत मौलाना सैयद ज़फ़रुद्दीन बिहारी अलैहिर्रहमा को एक शाह साहब मिले, जिनका ख़्याल था कि फ़न्ने तकसीर का इल्म सिर्फ़ मुझको है। दौराने गुफ़्तगू में मौलाना बिहारी ने उन से दरयाफ़्त किया कि जनाब नक़्शे मुरब्बा कितने तरीक़े से भरते हैं? शाह साहब मज़कूर ने बड़े फ़ख़रिया अन्दाज़ में जवाब दिया कि सोला तरीक़े से। फिर उन्होंने मौलाना बिहारी से पूछा कि आप कितने तरीक़े से भरते हैं? मौलाना ने बताया कि अल्हमदुलिल्लाह, मैं नक़्शे मुरब्बा को गियारह सौ बावन तरीक़े से भरता हूं। शाह साहब सुनकर महवे हैरत हो गए और पूछा कि मौलान! आपने फ़न्ने तकसीर किस से सीखा है? मौलाना बिहारी ने फ़रमाया। हुज़ूर पुर नूर आला हज़रत

इमाम अहमद रज़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से। शाह साहब ने दरयाफ़्त किया कि आला हज़रत रज़ियल्लाहु तआला अन्हु नक़्शे मुरब्बा कितने तरीक़ों से भरते थे ? मौलाना बिहारी ने जवाब दिया कि दो हज़ार तीन सौ तरीक़े से। फिर तो शाह साहब ने हमा दानी का कीड़ा दिमाग़ से निकाल बाहर किया।

फ़न्ने तौक़ीयत की महारत के सिलसिले में अल्लामा बदरूद्दीन अहमद साहब यूं रक़म तराज़ हैं।

"फ़न्ने तौक़ीयत में आला हज़रत के कमाल का यह आलम था कि सूरज आज कब निकलेगा और किस वक़्त डूबेगा। इस को बिला तकल्लुफ़ मालूम कर लेते। सितारों की मारिफ़त और उनकी चाल की शिनाख़्त पर इस क़दर उबूर था कि रात में तारा और दिन में सूरज देख कर घड़ी मिला लिया करते और वक़्त बिल्कुल सही होता, एक मिनट का भी फ़र्क़ न पड़ता था।

१८ अक्तूबर १९१९ ई० को पटना के अंग्रेज़ी अख़बार "एक्सप्रेस" में एक अमेरिकी साइन्सदां, प्रोफ़ेसर अलबर्ट की एक पेशगोई शाए हुई। मौसूफ़ ने इल्मे नुजूम व हैयत पर मुतअद्दिद दलाइल क़ाइम करके उसे एक हक़ीक़त मनवाने की पूरी कोशिश की। उस पेशगोई का खुलासा यह है कि १७/ दिसम्बर १९१९ ई० को फ़लां फ़लां सैयारे और सूरज क़िरान में होंगे। सैयारे अपनी कशिश से सूरज को ज़ख़्मी कर देंगे जिस के बाइस उस रोज़ सख़्त तूफ़ान और ज़लज़ले आयेंगे और ज़मीन ऐसी डांवाडोल होगी कि कई हफ़्तों में अपनी असली हालत पर आने के क़ाबिल हो सकेगी। इस हौलनाक पेशगोई ने दुनिया में उमूमन और हिन्दुस्तान में ख़ास तौर पर एक तहलका मचा दिया था।

इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी को जब इस वाक़िए का इल्म हुआ तो आप ने प्रोफ़ेसर अलबर्ट के दलाइल का जाइज़ा लिया। मौसूफ़ के दलाइल को महज़ एक अक़्ली ढकोसला साबित किया। कुरआनी तालीमात की रौशनी में अलबर्ट के दावे को रद किया, इल्मे नुजूम, हैयत और ज़ीजात के तहत मौसूफ़ के बयानात व मज़ऊमा दलाइल को

तारे अन्कबूत से कमज़ोर साबित कर दिखाया। आप का यह हैरत अंगेज़ तज्ज़ीया मुख़्तलिफ़ अख़बारात व रसाइल में शाए हुआ ताकि मुत्तहिदा हिन्दुस्तान के मुसलमान उस पेशगोई पर यक़ीन करके अपने ख़्यालात को मुतज़लज़ल न कर बैठें। आप की उस हैरत अंगेज़ तहरीर का ख़ुलासा हयाते आला हज़रत में सफ़ा ६५ ता ६७ और सवानेह आला हज़रत में सफ़ा ७५ ता ७६ मौजूद है। इन उलूम से दिलचस्पी रखने वाले हज़रात मज़कूरा कुतुब की तरफ़ रूजू करके बाज़ दलाइल मुलाहज़ा फ़रमा सकते हैं।

हक़ीक़त यह है कि इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी अलैहिर्रहमा को इतने उलूम व फुनून में जो कमाल हासिल हुआ, उस का बहुत कम हिस्सा कस्बी और अक्सर व बेशतर वहबी है। यह अम्र हर उस ज़ी इल्म से पोशीदा नहीं जिस की फ़ाज़िले बरैलवी के हालाते ज़िन्दगी और आप की नसानीफ़ पर नज़र है। जुमला बुज़ुर्गाने दीन के हालात इस अम्र की वाज़ेह शहादत हैं कि जिस तरह वह हज़रात दीने मतीन की हिमायत और अलाए कलिमतुल हक़ की ख़िदमात सर अंजाम देने के लिए खड़े हुए तो ताईदे रब्बानी और इनायते मुस्तफ़वी ने हमेशा उनकी दस्तगीरी और सर परस्ती फ़रमाई। यही वजह है कि उन बुज़ुर्गों ने इस राह की दुश्वार गुज़ार तरीन घाटियों और सख़्त से सख़्त मराहिल को पूरे अज़्म व इस्तिक़लाल से ख़न्दा पेशानी के साथ उबूर किया और मंज़िले मक़सूद पर पहुंचने से उन्हें कोई दुशवारी ने रोक सकी। आप के ज़माने में फ़िर्क़ा बाज़ी का जिस तरह फ़ितना उठा, लुसूसे दीन ने इस्लाह के नाम पर जिस तरह भोले भाले मुसलमानों को गुमराह करना शुरू किया, कितने साहिबाने जुब्बा व दस्तार ने अहले इस्लाम को ईमान से कोरे रखने की मुहिम चलाई, उन सब के मुक़ाबले में आप का मैदान में कूदना, चौमुखी लड़ाई लड़ना, अज़मते ख़ुदावन्दी व शाने मुस्तफ़वी का दिफ़ा करना, इस्लाम और मुसलमानों की ख़ैर ख़्वाही में जुमला मुब्तदेईन को आजिज़ कर दिखाना, यह ताईदे रब्बानी और इनायते मुस्तफ़वी ही का करिश्मा है।

आप ने मुक़द्दस शजरे इस्लाम में ग़ैर इस्लामी अक़ाइद व नज़रियात की पेवन्द कारी करने वालों से क़ल्मी जिहाद किया नीज़ उलमाए हक़ और उलमाए सू में पहचान कराई। ऐसे मुस्लेहीन के तअक़्क़ुब में आप हमेशा सरगरमे अमल रहे जो नए नए फ़िर्के बनाकर मुसलमानों के इत्तिहाद को पारह पारह कर रहे थे। और बात बात पर मुसलमानों को मुश्रिक, काफ़िर और बिदअती ठहराने को दीन की ख़िदमत समझते थे। फ़ाज़िले बरैलवी ने ऐसे हज़रात के जुमला मज़ऊमा दलाइल के तार पौद बिखेर कर रख दिए और मुजद्दिदाना शान के साथ दूध का दूध और पानी का पानी कर दिखाया।

ख़ालिके काईनात की सिफ़ात को जब उलमाए सू ने अपने ग़लत अक़्ली पैमानों से मापना शुरू कर दिया, खुद साख़्ता तौहीद की तबलीग़ करने लगे, सरवरे कौनो मकां सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के कमालाते आलिया की ऐसी हुदूद मुतअय्यन करने लग गए जिस की कोई मुसलमान हरगिज़ जसारत नहीं कर सकता। उन हालात से मजबूर होकर आप ने अज़मते खुदावन्दी और शाने मुस्तफ़वी का अलम बुलन्द किया था। ऐसा करने वालों को समझाया बुझाया, ख़ौफ़े खुदा और ख़तरए रौज़े जज़ा याद दिलाया, जब वह किसी तरह बाज़ न आए और ब्रिटिश गवर्नमेंट के हाथों कठपुतली बन कर अपनी मख़सूस डगर पर ही चलते रहे तो आप भी इस्लाम और मुस्लिमीन की ख़ैर ख़्वाही में आख़री वक़्त तक उनका रद्दे बलीग़ करते रहे। यही आप का वह जुर्म है जिस की पादाश में उम्र भर सब्बो शतम का निशाना बनते रहे और आज तक उन मुब्तदेईन की मानवी ज़ुर्रीयत आप के ख़िलाफ़ इतना ज़हर उगल रही है, जिस का अशरे अशीर भी इन बांके मुवहहेदीन को काफ़िरों और मुश्रिकों के ख़िलाफ़ बोलना नसीब नहीं हुआ।

अगर आप फ़िरक़े बातिला के अलमबरदारों को न टोकते, इस्लामी अक़ाइद व नज़रियात की मन मानी ताबीरें करने वालों का मुहासबा न करते तो तमाम फ़िर्कों के नामवर उलमा भी इस अक़रीए इस्लाम और नाबग़ए अस्र की इल्मी अज़मत व जलालत को बरमला तस्लीम कर

लेते लेकिन दीन के मुहाफ़िज़ों ने तहसीन व आफ़रीन की ख़ातिर ऐसी सौदा बाज़ी कभी नहीं की। आप अज़्मते ख़ुदावन्दी व नामूसे मुस्तफ़वी के निगहबान और इस्लाम के पासबान थे, इसी लिए तान व तशनीअ और तहसीन व आफ़रीन से बे नियाज़ होकर, हर हालत में अपना फ़र्ज़ अदा करते रहे।

किसी बेदार जमाअत में अगर इस मर्तबे का कोई आलिम पैदा हो जाता तो वह लोग उसके उलूम व फ़ुनून से न सिर्फ़ ख़ुद मुस्तफ़ीद होते बल्कि पूरी दुनिया को उसके अफ़कार व नज़रियात पढ़ने और समझने पर मजबूर कर देते लेकिन मुसलमानाने अहले सुन्नत व जमाअत और खुसूसन उल्माए अहले सुन्नत की बेदारी की दाद कौन दे सकता है जबकि इस नाबग़ए अस्र के इल्मी कारनामों और तहक़ीक़ी जवाहर रेज़ों को कमा हक़्क़हू महफ़ूज़ भी नहीं किया और न यगानों और बेगानों को अपने इस मुहसिन की इल्मी अज़मत से आशना कराने की ख़ास ज़हमत ही गवारा फ़रमाई है। इस के बावजूद भी अगर आला हज़रत का नाम ज़िन्दा है तो सिर्फ़ उनके अज़ीम और जानदार इल्मी कारनामों की वजह से ज़िन्दा है और इन्शाअल्लाह तआला आप का नाम क़ियामत तक ज़िन्दा व ताबिन्दा रहेगा क्योंकि।

**हरगिज़ नमीरद आंकि दिलश ज़िन्दा शुद बइशक़**
**सब्त अस्त बर जरीदए आलमे दवामे मा**

वफ़ात से कई माह पेशतर आप ने कोहे भुवाली पर ३/रमज़ानुल मुबारक १३३६ हि. को अपने विसाल की तारीख़ इस आयते करीमा से निकाली। **"व युताफु अलैहिम बिआनियतिम मिन फ़िज़्ज़तिव्व अकवाब"** यानी ख़ुद्दाम चाँदी के बर्तन और आंजूरे लेकर (जन्नत में) उनके गिर्द घूम रहे हैं। इस शहीदे मोहब्बत ने अपना मिशन पूरा करके जुमअतुल मुबारक के रोज़ २५/ सफ़रूल मुज़फ़्फ़र १३४० हि./१९२१ ई० को दो बज कर अड़तीस मिनट पर, ऐन अज़ाने जुमा के वक़्त **हय्या अलल फ़लाह** का नग़मए जांफ़ज़ा सुन कर दाइए अजल को लब्बैक कहा और इस जहाने फ़ानी से आलमे जाविदानी की तरफ़ सुधार गए। इन्ना

**लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।**

विसाल के दो घन्टे सत्तरह मिनट पहले तजहीज़ व तकफ़ीन और बाज़ ज़रूरी उमूर के मुताल्लिक़ विसाया शरीफ़ क़लमबन्द कराए जो चौदह अहम नकात पर मुश्तमिल हैं। हज़रत मुहद्दिस किछौछवी रहमतुल्लाह अलैहि के पीर व मुर्शिद ने आला हज़रत के विसाल की ख़बर सुन कर फ़रमाया। **रहमतुल्लाहि तआला अलैहि** देखा गया कि इसमें विसाल की तारीख़ भी है। ख़ुद हज़रत मुहद्दिस किछौछवी अलैहिर्रहमा ने तारीखे़ वफ़ात **इमामुल हुदा अब्दुल मुस्तफ़ा अहमद रज़ा** निकाली थी।

आला हज़रत अलैहिर्रहमा से फ़ैज़ियाब होने वाले १६ खुश क़िसमत हज़रात की फ़ेहरिस्त तो बड़ी तवील है ज़ैल में आप के चन्द नामवर ख़ुलफ़ा की फ़ेहरिस्त पेश की जाती है।

१. हज्जतुल इस्लाम मौलाना हामिद रज़ा ख़ां, ख़लफ़े अकबर (अलमुतवफ़्फ़ा १३६२ हि./१९४३ ई०)

२. मुफ़्तीए आज़मे हिन्द मौलाना मुस्तफ़ा रज़ा ख़ां, ख़लफ़े असग़र मद्दा ज़िल्लहुल आली (रौनक़ अफ़रोज़ बरैली शरीफ़ हैं)

३. सदरूश्शरीआ मौलाना अमजद अली आज़मी बरकाती मुसन्निफ़ "बहारे शरीअत" (अलमुतवफ़्फ़ा १३६८ हि./ १९४८ ई०)

४. सदरूल अफ़ाज़िल मौलाना नईमुद्दीन मुरादाबादी मुसन्निफ़ "ख़ज़ाइनुल इरफ़ान" (अलमुतवफ़्फ़ा १३६८ हि./ १९४८ ई०)

५. मुलेकुल उलमा मौलाना ज़फ़रूद्दीन बिहारी मुसन्निफ़ " हयाते आला हज़रत" (अलमुतवफ़्फ़ा १३८२ हि./१९६२ ई०)

६.मुहद्दिसे आज़म मौलाना शाह अहमद शरफ़ जीलानी किछौछवी (अलमुतवफ़्फ़ा १३४४ हि./१९२५ ई०)

७. शैख़ुल मुहद्दिसीन मौलाना सैयद दीदार अली अलवरी बानी" हिज़्बुल अहनाफ़" लाहौर (अलमुतवफ़्फ़ा १३५२ हि./१९३३ ई०)

८. मुबल्लिग़े इस्लाम मौलाना शाह अब्दुल अलीम सिद्दीक़ी मेरठी (अलमुतवफ़्फ़ा १३७३ हि./१९५२ ई०)

९. हज़रत मौलाना अब्दुस्सलाम जबलपूरी (अलमुतवफ़्फ़ा १३६३ हि. /१९४४ई०)

१०. सुल्तानुल वाइज़ीन मौलाना अब्दुल अहद पीलीभीती (अलमुतवफ़्फ़ा १३४८ हि./ १९२९ ई०)

११. मौलाना हाजी लाल मुहम्मद खां मद्रासी

१२. मौलाना मुहम्मद शफ़ी अहमद बसील पूरी

१३. मौलाना हसनैन रज़ा ख़ां बरैलवी

१४. मुफ़्ती सी–पी– मौलाना बुरहानुल हक़ जबलपूरी

१५. मौलाना रहीम बख़्श आरवी शाहाबादी

१६. मौलाना अहमद मुख़्तार सिद्दीक़ी मेरठी

१७. मौलाना मुहम्मद शरीफ सियालकोटी (कोटली लोहारां)

१८. मौलाना इमामुद्दीन सियालकोटी (कोटली लोहारां)

१९. मौलाना उमर बिन अबू बकर खतरी, साकिन शहर पोरबंदर

२०. मौलाना फ़तेह अली शाह पंजाबी (खरोटा सैयदां)

२१. मौलाना सैयद सुलैमान अशरफ़ बिहारी

२२. मौलाना मुफ़्ती गुलाम जान हज़ारवी

२३. मौलाना ज़ियाउद्दीन अहमद मुहाजिर मदनी मद्दा ज़िल्लहुल आली

२४. मौलाना अबुल बर्कात सैयद अहमद शाह मद्दा ज़िल्लहुल आली (नाज़िमे आला हिज़्बुल अहनाफ़– लाहौर)

२५. मौलाना सैयद अली अकबर शाह अलीपूरी

२६. मौलान सैयद मुहम्मद अज़ीज़ ग़ौस(अलमुतवफ़्फ़ा १३६३ हि. /१९४३ ई०)

२७. मौलाना मुहम्मद इब्राहीम रज़ा ख़ां उर्फ़ जीलानी मियां

२८. मौलाना सैयद गुलाम जान, जाम जोधपूरी

२९. अल्लामा अबुल फ़ैज़ क़लन्दरी अली सुहरवरदी लाहौरी

(अलमुतवफ़्फ़ा १३७८ हि./ १९५८ ई०)

३०. मौलाना अहमद हुसैन अमरोहवी

३१. मौलाना उमरुद्दीन हज़ारवी

३२. मौलाना शाह मुहम्मद हबीबुल्लाह क़ादरी मेरठी

३३. शैख़ मुहम्मद अब्दुल हई बिन सैयद अब्दुल कबीर मुहद्दिस (अलमुतवफ़्फ़ा १३३२ हि./ १९१३ ई०)

३४. मुफ़्तीए अहनाफ़ व क़ाज़ी मक्का मुकर्रमा, शैख़ सालेह कमाल (अलमुतवफ़्फ़ा १३२५ हि./ १९०७ ई०)

३५. मुहाफ़िज़े कुतुबे हरम, सैयद इस्माईल बिन सैयद ख़लील मक्की (अलमुतवफ़्फ़ा १३३८ हि० १९१९ ई०)

३६. सैयद मुस्तफ़ा बिन सैयद ख़लील मक्की (अलमुतवफ़्फ़ा १३३९ हि./ १९२० ई०)

३७. शैख़ आबिद बिन हुसैन मुफ़्ती मालिकीया मक्की

३८. शैख़ अली बिन हुसैन मालिकी मक्की

३९. शैख़ अब्दुल्लाह बिन शैख़ अबिल ख़ैर मिरदाद

४०. शैख़ अबू हुसैन मरज़ूक़ी

४१. शैख़ मामूनुल बर्री अल मदनी

४२. शैख़ असद रेहान

४३. शैख़ अब्दुर्रहमान

४३. शैख़ जमाल बिन मुहम्मदुलअमीर

४४. शैख़ अब्दुर्रहमान दहलान

४५. शैख़ बकर रफ़ी

४६. शैख़ हसनुल अजमी

४७. शैखुद्दलाइल सैयद मुहम्मद सईद

४८. शैख़ उमर अलमहरूसी

४९. शैख़ उमर बिन हमदान

५०. शैख़ अहमद ख़िज़रावी मक्की

५१. शैख़ुल मशाइख़ अहमद बिन अबिल ख़ैर मिरदाद

५२. सैयद सालिम बिन ईद रूस

५३. सैयद अलवी बिन हसन

५४. सैयद अबू बकर बिन सालिम

५५. शैख़ मुहम्मद उस्मान दहलान

५६. शैख़ मुहम्मद यूसुफ़

५७. शैख़ अब्दुल क़ादिर कुरदी (अलमुतवफ़्फ़ा १३४६ हि./ १९२७ ई०)

५८. शैख़ मुहम्मद बिन सैय्यद अबू बक्र अर्रशीदी

५९. शैख़ मुहम्मद सईद बिन सैयद मुहम्मद मग़्रिबी

६०. शैख़ अब्दुल्लाह फ़रीद ( अलमुतवफ़्फ़ा १३३५ हि./ १९१६ ई०)

रहमतुल्लाहे तआला अलैहिम

JANNATI KAUN?

वै हस्तियां इलाही किस देस बस्तियां हैं<br>
अब देखने को जिन के आंखें तरसतियां हैं

# सीरते मुजद्दिद

**जिस से जिगरे लाला में ठण्डक हो वह शबनम**
**दरियाओं के दिल जिस से दहल जायें वह तूफ़ां**

इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी कुद्देस सिर्रहू जिस तरह अपने दौर में मर्कज़े दायरए उलूम व फ़ुनून थे। उसी तरह मस्त जामे बादए उल्फ़त होने में मुन्फ़रिद और महबूबे परवरदिगार, अहमदे मुख़्तार सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के शैदाइयों में अपनी मिसाल आप थे। आप का इश्क़े रसूल एक पिघलती हुई शमा होना मशहूरे ख़लाइक़ है जिस का मोतक़िदीन व मुख़ालिफ़ीन सब को एतराफ़ है। मैदाने अमल में मोहब्बत का इज़हार चार तरह होता है।

१. महबूब के फ़िराक़ में तड़पना, वेस्ल को मन्ज़िले मक़सूद समझना और उसके ज़िक्र व फ़िक्र में मुस्तग़रक़ रहना।

२. महबूब के यारों और प्यारों का दिली मोहब्बत से अदब व एहतराम करना।

३. महबूब के हर क़ौल व फ़ेअल को महबूब समझ कर अपना दस्तूरूल अमल बनाए रखना।

४. महबूब के दुश्मनों से दिली नफ़रत रखना।

आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू की सीरत का मरकज़ व महवर, सिर्फ़ और सिर्फ़ जज़्बए इश्क़े रसूल था। अगर मुजद्दिदे मेरा हाज़िरा की सीरत कोई चन्द लफ़्ज़ों में पूछना चाहे तो अहक़र बिला ख़ौफ़े तरदीद, अलल एलान कहता है कि ''आला हज़रत की सीरत इशक़े रसूल के तक़ाज़ों का मजमूआ थी।'' आप की जुमला तसानीफ़ हमारे इस दावा के रौशन दलाइल हैं और नातिया दीवान'' हदाइक़े बख़्शिश'' तो वह मुंह बोलता सुबूत है जिस की नज़ीर चश्मे फलक कुहन ने कम ही देखी होगी। नबी करीम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से आप की वालिहाना मोहब्बत के सिलसिले में यहां बहस करना तकरार का मोजिब और बाइसे तवालत होगा जबकि दूसरी किताब के अन्दर आपके नातिया

कलाम का नमूना मौजूद है। नीज़ मन्सबे रिसालत के तहत उस किताब में मुख़्तलिफ़ उनवानात पर आप की निगारिशात का ख़ुलासा पेश किया जाएगा इन्शाअल्लाह तआला।

अब देखना यह है कि इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी को नबी करीम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के यारों और प्यारों की किस क़दर दिली मोहब्बत थी और किस दर्जा आप उनका अदब व एहतेराम करते थे। इस अम्र का भी एक आलम शाहिद है कि फ़ाज़िले बरैलवी जैसा अंबियाए किराम व औलियाए एज़ाम के नंग व नामूस का पासबान और ताज़ीम व तौकीर का अलमबरदार दूसरा देखने में नहीं आया, बल्कि बाज़ हज़रात तो अपनी दूरबीन निगाहों से देख कर यहां तक फ़रमा गए कि अगर इस दौरे पुर फ़ेतन में इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी पैदा न होते तो मुक़र्रेबीने बारगाहे इलाहिया के अदब व एहतराम को वहाबियत की तुन्द व तेज़ आंधी ख़स व ख़ाशाक की तरह उड़ा कर ले जाती। चूंकि इस सिलसिले में कई मसाइल शामिले मजमूआ हैं लिहाज़ा ज़्यादा अर्ज़ करने की यहां हाजत नहीं। हज़रत ग़ौसे आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु की अक़ीदत के बारे में मौलाना बदरूद्दीन अहमद साहब ने एक वाक़िआ बयान किया है जो मौसूफ़ के अल्फ़ाज़ में यूं है।

"छ बरस की उम्र में आप ने मालूम कर लिया था कि बग़दाद शरीफ़ किधर है, फिर उस वक़्त से आख़िर दम तक बग़दाद शरीफ़ की जानिब पांव नहीं फैलाए।

आला हज़रत के नामवर शागिर्द व ख़लीफ़ा हज़रत मुहद्दिस किछौछवी सैयद अहमद अशरफ़ जीलानी अलैहिर्रहमा ने इस सिलसिले में एक वाक़िआ यूं बयान किया है।

"मैं उस सरकार में किस क़दर शोख़ था या शौख़ बना दिया गया था, अपना जवाब आला हज़रत की नशिस्त की चारपाई पर रख कर अर्ज़ करने लगा हुज़ूर ! क्या इस इल्म का कोई हिस्सा अता न होगा, जिस का उलमाए किराम में निशान भी नहीं मिलता। मुस्कुराकर फ़रमाया कि मेरे पास इल्म कहां, जो किसी को दूं। यह तो आप के जद्दे अमजद सरकारे ग़ौसीयत का फ़ज़ल व करम है और कुछ नहीं।

यह जवाब मुझ नंगे ख़ान्दान के लिए ताज़ियानए इबरत भी था कि लूटने वाले लूट कर ख़ज़ाना वाले हो गए और मैं" पिदरम सुल्तान बूवद" के नशा में पड़ा रहा और यह जवाब इसका भी निशान देता था कि इल्मे रासिख़ वाले मक़ामे तवाज़ो में क्या होकर अपने को क्या कहते हैं। यह शोख़ी मैंने बार बार की और यही जवाब अता होता रहा और हर मर्तबा में ऐसा हो गया कि मेरे वजूद के सारे कुल पुर्ज़े मुअत्तल हो गए हैं।

इसी सिलसिले में हज़रत मुहद्दिस किछौछवी एक दूसरा वाक़िआ और बयान फ़रमाते हैं, जो मौसूफ़ के तब्सरे के साथ क़ारेईने किराम की ख़िदमत में पेश करने की सआदत हासिल कर रहा हूं।

"दूसरे दिन कारे इफ़्ता पर (मुहद्दिस साहब को) लगाने से पहले, ख़ुद गियारह रूपये की शीरीनी मंगाई, अपने पलंग पर मुझको बिठाकर और शेरीनी रख कर, फ़ातिहा ग़ौसिया पढ़कर, दस्ते करम से शीरीनी मुझको भी अता फ़रमाई और हाज़िरीन में तक़सीम का हुक्म दिया कि अचानक आला हज़रत पलंग से उठ पड़े। सब हाज़िरीन के साथ मैं भी खड़ा हो गया कि शायद किसी शदीद हाजत से अन्दर तशरीफ़ ले जायेंगे। लेकिन हैरत बालाए हैरत यह हुई कि आला हज़रत ज़मीन पर उकड़ूं बैठ गए। समझ में न आया कि यह क्या हो रहा है? देखा तो यह देखा कि तक़सीम करने वाले की ग़फ़लत से शीरीनी का एक ज़र्रह ज़मीन पर गिर गया था और आला हज़रत उस ज़र्रे का नोके ज़बान से उठा रहे हैं और फिर अपनी नशिस्त गाह पर बदस्तूर तशरीफ़ फ़रमा हुए। इसको देखकर सारे हाज़िरीन सरकारे ग़ौसीयत की अज़मत व मोहब्बत में डूब गए और फ़ातिहा ग़ौसिया की शीरी के एक एक ज़र्रे के तबर्रुक हो जाने में किसी दूसरी दलील की हाजत न रह गई और अब मैं ने समझा कि बार बार जो मुझसे फ़रमाया गया कि मैं कुछ नहीं, यह आप के जद्दे अमजद का सदक़ा है, वह मुझे ख़ामोश कर देने के लिए ही न था और न सिर्फ़ मुझको शर्म दिलाना ही थी बल्कि दर हक़ीक़त आला हज़रत, ग़ौसे पाक के हाथ में" चूं क़लम दर दस्ते कातिब" थे, जिस तरह ग़ौसे पाक, सरवरे दो आलम मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के हाथ में चूं क़लम दर दस्ते कातिब थे और

कौन नहीं जानता कि रसूले पाक अपने रब की बारगाह में ऐसे थे कि कुरआने करीम ने फ़रमाया। **व मा यनतिकु अनिल हवा इन हुवा इल्ला वहियुन यूहा।**

नबी करीम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की औलादे अमजाद यानी हज़रात सादाते किराम का इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी किस दर्जा अदब व एहतराम करते और ताज़ीम व तौक़ीर बजा लाते, ऐसे बेशुमार वाक़िआत हैं। एक वाक़िआ मुलाहज़ा हो।

किसी रोज़ एक सैयद साहब ने ज़नान ख़ाने के दरवाज़े पर आकर आवाज़ दी :

"दिलवाओ सैयद को" आला हज़रत ने अपनी आमदनी से अख़राजाते उमूरे दीनिया के लिए दो सौ रूपया माहवार मुक़र्रर फ़रमाए थे। उस माह की रक़म उसी रोज़ आप को मिली थी। सैयद साहब की आवाज़ सुनते ही फ़ौरन वह रूपयों वाला आफ़िस बक्स लेकर दौड़े और सैयद साहब के सामने पेश कर के फ़रमायाः हुज़ूर ! यह नज़राना हाज़िर है। सैयद साहब काफ़ी देर तक इस रक़म को देखते रहे और फिर एक चवन्नी उठा कर फ़रमायाः बस ले जाइए। आला हज़रत ने ख़ादिम से फ़रमाया कि जब इन सैयद साहब को देखो तो फ़ौरन एक चवन्नी नज़्र कर दिया करना ताकि उन्हें सवाल करने की ज़हमत न उठानी पड़े।"

**मैं इक मुहताजे बे वक़अत ग़दा तेरे सगे दर का**
**तेरी सरकार वाला है , तेरा दरबार आली है**

इसी सिलसिले में एक दूसरा ईमान अफ़रोज़ वाक़िआ मुलाहिज़ा फ़रमाईए, जो दर्से अदब का आईना हैः एक दफ़ा बाद नमाज़े जुमा आला हज़रत फाटक में तशरीफ़ फ़रमा थे कि शैख़ इमाम अली क़ादरी रज़वी (मालिक होटल आइस्क्रीम बम्बई) के छोटे भाई (मौलवी नूर मुहम्मद साहब जो उन दिनों बरैली शरीफ़ में पढ़ते थे) के क़नाअत अली, क़नाअत अली पुकारने की आवाज़ आई। आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू ने उन्हें बुलवाया और फ़रमाया किः अज़ीज़म! सैयद साहब को इस तरह पुकारते हो ? मौलवी नूर मुहम्मद साहब ने नदामत से नज़रें झुका लीं। आप ने फ़रमायाः सादात की ताज़ीम का आइन्दा ख़्याल

रखिए और जिस आली घराने के यह अफ़राद हैं उसकी अज़मत को हमेशा पेशे नज़र रखिए। इसके बाद हाज़िरीन को मुख़ातिब करके फ़रमाया कि सादात का इस दरजा एहतेराम मल्हूज़ रखना चाहिए कि क़ाज़ी अगर किसी सैयद पर हद लगाए तो यह ख़्याल तक न करे कि मैं इसे सज़ा दे रहा हूं बल्कि यूं तसव्वुर करे कि शाहज़ादे के पैरों में कीचड़ भर गई है उसे धो रहा हूं।"

**तेरी नस्ले पाक में है बच्चा बच्चा नूर का**
**तू है अैने नूर, तेरा सब घराना नूर का**

सादात के एजाज़ व इकराम के मुताल्लिक़ एक सबक़ आमोज़ वाक़िआ और आला हज़रत का मामूल मुलाहिज़ा हो: आला हज़रत के हां दस्तूर था कि मीलाद शरीफ़ के मौक़ा पर सैयद हज़रात को आप के हुक्म से दो गुना हिस्सा मिला करता था। एक दफ़ा सैयद महमूद जान साहब को तक़सीम करने वाले की ग़लती से इक़हरा हिस्सा मिला। आला हज़रत को मालूम हुआ तो फ़ौरन तक़सीम करने के वाले को बुलवाया और उस में एक ख़्वान शीरीनी को भरवा कर मंगवाया, फिर माज़रत चाहते हुए सैयद साहब मौसूफ़ की नज़्र किया और तक़सीम करने वाले को हिदायत की कि कोई आइन्दा ऐसी ग़लती का इआदा न हो क्योंकि हमारा क्या है ? सब कुछ इन हज़रात के ही आली घराने की भीक है।

इसी लिए तो आला हज़रत कुदेस सिर्रहू बारगाहे रिसालत में यूं अर्ज़ परदाज़ हुआ करते थे:।

**आसमां ख़्वां, ज़मीन ख़्वां, ज़माना मेहमां**
**साहबे ख़ाना लक़ब किस का है? तेरा तेरा**

इस दौरे पुर फ़ेतन में जबकि शाने रिसालत में लोग गुस्ताख़ियां और जरी हो गए, बाज़ तो वहाबियत की नुहूसत के ज़ेरे असर गज़ गज़ भर की ज़ुबान निकाल कर मन्सबे नबुव्वत पर इस अन्दाज़ से गुफ़्तगू करते हैं कि सुनने वाला यह सोचने पर मजबूर हो जाता है कि या इलाही ! क्या यह एक उम्मती कहलाने वाले के अल्फ़ाज़ हैं? क्या इसने मुसलमान कहलाने के जुमला हुकूक़ महफ़ूज़ करवा छोड़े हैं? यह तौहीद के

अलमबरदार हैं या तौहीने शाने रिसालत के ठीकेदार? इसके बरअक्स इमामे अहले सुन्नत का मामूल मुलाहज़ा हो कि सादाते एज़ाम के बच्चों का भी कितना अदब व एहतेराम मलहूज़ रखा जाता था।

सैयद अय्यूब अली रज़वी का बयान है कि एक नौ उम्र सैयद लड़का उमूरे ख़ाना दारी में इमदाद के लिए आला हज़रत के घर मुलाज़िम हो गया। कुछ दिनों बाद आला हज़रत को मालूम हुआ कि नया मुलाज़िम तो सैयद ज़ादा है। आप ने तमाम अहले ख़ाना को ताकीद की कि ख़बरदार! इस लड़के से कोई काम मुतलक़न न लिया जाए। क्योंकि यह मख़दूम ज़ादा है, बल्कि इनकी ख़ातिर तवाज़ों में किसी तरह की कोई कमी न आए। इन की हस्ब मन्शा हर चीज़ ख़िदमत में पेश करते रहना, ग़र्ज़ ये कि साहबज़ादे को पूरा पूरा आराम पहुंचाया जाए। तन्ख़्वाह जो मुक़र्रर की है वह हस्बे वादा देते रहना लेकिन तन्ख़्वाह समझकर नहीं बल्कि बतौरे नज़राना पेश होता रहे।

**मैं ख़ाना ज़ादे कुहना हूं, सूरत लिखी हुई**
**बन्दों कनीज़ों में मेरे मादर पिदर की है**

उलमाए अहलेसुन्नत, हुज्जाजे किराम और सुन्नी हज़रात के साथ आला हज़रत का बरताव किस क़िस्म का होता था इस सिलसिले में मौलाना बदरूद्दीन अहमद मद्दा ज़िल्लहू ने यूं वज़ाहत की है।

**अशिद्दाओ अलल कुफ़्फ़ारे रूहमाऊ बैनहुम** के मज़मून के मुताबिक़ जिस क़दर काफ़िरों, मुर्तदों, मुलहिदों और बे दीनों पर सख़्त थे यूंही सुन्नी मुसलमानों और उलमाए हक़ के लिए अबरे करम थे। जब किसी सुन्नी आलिम से मुलाक़ात होती, देखकर बाग़ बाग़ हो जाते और उसको ऐसी इज़्ज़त व कदर करते जिस के लाइक़ वह अपने को न समझता। जब कोई साहब हज्जे बैतुल्लाह शरीफ़ करके आप की ख़िदमत में हाज़िर होते तो उन से पहले यही पूछते कि सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की बारगाहे बेकस पनाह में भी हाज़िरी दी ? अगर वह हां कहते तो फ़ौरन उनके क़दम चूम लेते और अगर कहते कि नहीं तो फिर उनकी जानिब बिल्कुल तवज्जोह न फ़रमाते।

इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी को अगर तीसरे मैदान में देखा जाए

तो साफ़ नज़र आएगा कि सुन्नते रसूल के आप हद दर्जा मुत्तबे और महबूब की रज़ा जोई में हर वक़्त कोशां रहते थे। अरब व अजम के मुम्ताज़ अहले इल्म और बा कमाल हज़रात ने भी तस्लीम किया है कि फ़ाज़िले बरैलवी कुद्देस सिर्रहू जैसा माहीए सुन्नत और क़ातेए बिदअत उस दौर में कोई देखा नहीं गया। इत्तिबाए सुन्नत आप की फ़ितरते सानिया बन गया था। यह हालात की सितम ज़रीफ़ी है कि मुब्तदेईने ज़माना जिन की जमाअतें तक बिदअत और ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के अहद की ज़िन्दा यादगार हैं और जो कुफ़्रिया बिदआत तक के मुरतकिब व मोतक़िद है वह फ़ाज़िले बरैलवी जैसे मुत्तबए सुन्नत और दुशमने बिदअत पर न सिर्फ़ बिदअती बल्कि सर चशमए बिदआत होने का इलज़ाम लगा कर हक़ीक़ते हाल से बे ख़बर मुसलमानों को गुमराह करने में मसरूफ़ रहते है और इस तरह अपने अकाबिर की बे राह रवी पर पर्दा डालने की ग़र्ज़ से कैसे कैसे बुज़ुर्गों पर बुहतान बाज़ी और इलज़ाम तराशी का बाज़ार गर्म किए रखते हैं। ज़ैल में आला हज़रत के एहतिमामे शरीअत और इत्तिबाए सुन्नत के चन्द वाक़िआत और आप के मामूलात पेश किए जाते हैं।

**इक़ामते सलात:** इस सिलसिले में सैयद. अय्यूब अली रज़वी का बयान मुलाहज़ा हो:

"आला हज़रत तन्दुरूस्त हों या बीमार। पांचों वक़्त मस्जिद में बा जमाअत नमाज़ अदा करने के ख़ूगर थे और अपने मुरीदों को भी हमेशा इस अम्र की ख़ास हिदायत फ़रमाया करते थे। जमाअत का मुक़र्रर वक़्त हो जाने पर किसी का इन्तिज़ार न करते थे। मौसमे गर्मा में नमाज़ ज़रा देर करके पढ़ते लेकिन ऐसा नहीं कि मकरूह वक़्त आ जाए।

नमाज़ अदा करते वक़्त रूकू, सुजूद, क़ौमा, क़ादा और जलसा वग़ैरह की सहीह अदायगी का ख़ास ख़्याल रखते थे। आप हुरूफ़ को उनके मख़ारिज से सिफ़ाते लाज़िमा व मुहस्सिना के साथ अदा करने में बहुत एहतियात फ़रमाया करते थे।

एक दफ़ा कोई साहब ज़ुहर की चार सुन्नतें पढ़कर फ़ारिग़ हुए तो आप ने उनको अपने पास बुलाया और फ़रमाया कि आप की एक रकआत भी नहीं हुई। क्योंकि सज्दा करते वक़्त आप की नाक ज़मीन से अलाहदा रही नीज़ पैरों की उंगलियों में से किसी एक का पेट ज़मीन से नहीं लगा था कि कम अज़ कम फ़र्ज़ तो अदा हो जाता, वाजिबात व सुनन व मुस्तहब्बात तो अलाहदा रहे। आप सुन्नतें फिर पढ़िये और हमेशा इस बात का ख़्याल रखिए कि नाक की हड्डी, जिस को बांसा कहते हैं (अपनी नाक पर उंगली रख कर बताया) यह और पैरों की कम अज़ कम एक उंगली का पेट ज़मीन से लगा रहना चाहिए वरना अगर कोई शख़्स नूह अलैहिस्सलाम की बराबर भी उम्र पाए और इसी तरह नमाज़ें पढ़ता रहेगा, तो याद रखिए कि वह सब अकारत ही जायेंगी।

मैं ने आला हज़रत को अक्सर औक़ात सफ़ेद लिबास में ही मलबूस देखा था। पाजामा बड़े पाइंचा का पहनते थे। नमाज़ के वक़्त हमेशा पगड़ी सर पर रखते थे और फ़र्ज़ तो बग़ैर पगड़ी के कभी अदा नहीं किया। एक दफ़ा अशरह मुहर्रमुल हराम के दिनों में एक साहब बादे नमाज़े जुमा आला हज़रत के फाटक में तशरीफ़ फ़रमा थे। उनके सर पर स्याह टोपी थी। आला हज़रत ने उन्हें देखा तो अपने दौलत ख़ाना से सफ़ेद टोपी मंगवाकर उनको देते हुए फ़रमाया कि इसे ओढ़ लीजिए और स्याह टोपी उतार दीजिए कि इसमें इज़्ज़दारों से मुशाबिहत का शुबह है। एक वलीए कामिल और मुजद्दिदे वक़्त की टोपी मिलने पर हाज़िरीन को उन साहब के मुक़द्दर पर रश्क आ रहा था।

एक दफ़ा आला हज़रत सख़्त बीमार थे। नशिस्त व बरख़ास्त की बिल्कुल ताक़त न थी। इस के बावजूद फ़र्ज़ नमाज़ मस्जिद में बा जमाअत अदा करते थे इन्तिज़ाम यह था कि कुर्सी बांध कर चार आदमी आप को मस्जिद में ले जाते और बादे नमाज़ दौलत ख़ाना में पहुंचा देते। बारहा मैं ने अपनी आंखों से देखा कि इस नाज़ुक हालत में भी आप खड़े होकर नमाज़ पढ़ने का इरादा करते, ताक़त न देखते हुए मजबूरन बैठ कर पढ़नी पड़ती, लेकिन ऐसी हालत में भी दोनों पैरों की उंगलियों के पेट ज़मीन पर लगाने की बेहद सई फ़रमाते।

**एहतरामे मसाजिद :** हर मस्जिद ख़ुदा का घर, इबादत का मक़ाम और शआएरुल्लाह में शामिल है। शआएरुल्लाह का एहतेराम तक़वा की निशानी है। इमाम अहमद रज़ा खां बरैलवी मस्जिद के छोटे छोटे आदाब का भी बड़ा ख़्याल रखते थे। सैयद अय्यूब अली रज़वी मरहूम ने बाज़ चश्म दीद हालात यूं बयान किए हैं।

" नमाज़े जुमा के लिए आला हज़रत रहमतुल्लाह अलैहि जिस वक़्त तशरीफ़ लाते तो फ़र्शे मस्जिद पर क़दम रखते ही तक़दीमे सलाम फ़रमाते। इसी तरह मस्जिद के जिस दर्जा में वुरूद होता जाता आप सलाम की तक़दीम करते। इस बात की भी आंखें शाहिद हैं कि मस्जिद के हर दर्जा में वस्ती दर से दाख़िल हुआ करते ख़्वाह आस पास के दरों से दाख़िल होने में सुहूलत ही क्यों न हो। नीज़ बाज़ औक़ात औराद व वज़ाइफ़ मस्जिद में ही बहालते ख़राम शेमालन जुनूबन पढ़ा करते मगर मुन्तहाए फ़र्शे मस्जिद से वापस हमेशा क़िब्ला रू हो कर ही होते, क़िब्ला की तरफ़ पुश्त करते हुए कभी किसी ने नहीं देखा।

मस्जिद के आदाब में दाख़िल है कि अन्दर दाख़िल होते वक़्त दायां क़दम रखा जाए और मस्जिद से जाते वक़्त पहले बायां क़दम बाहर रखना चाहिए। सैयद अय्यूब अली रजवी की ज़बानी इमाम अहले सुन्नत का अमल मुलाहज़ा फ़रमाइए।

" एक दफ़ा फ़रीज़ए फज्र अदा करने में ख़िलाफ़े मामूल किसी क़दर देर हो गई। नमाज़ियों की नज़रें बार बार काशानए अक़दस की तरफ़ उठ रही थीं कि इसी अस्ना में आप जल्दी जल्दी तशरीफ़ लाते हुए दिखाई दिए। उस वक़्त बिरादरम सैयद क़नाअत अली ने अपना यह ख़्याल मुझ पर ज़ाहिर किया कि इस तंग वक़्त में देखना यह है कि हज़रत दायां क़दम मस्जिद में पहले रखते हैं या बायां ? लेकिन क़ुरबान जायें इस आशिक़े रसूल और मुत्तबए सुन्नत के, कि दरवाज़ए मस्जिद के ज़ीने पर जिस वक़्त क़दमे मुबारक रखा तो दायां, तौसीई फ़र्शे मस्जिद पर क़दम पहले रखा तो दायां, क़दीमी फ़र्शे मस्जिद पर भी दायां क़दम पहले रखा, यूं ही हर सफ़ पर तक़दीम दायें क़दम ही से फ़रमाई, हत्ता कि मेहराब में मुसल्ले पर दायां क़दम ही पहले पहुंचा।

आदाबे मस्जिद के सिलसिले में सैयद अय्यूब अली रज़वी का एक चश्म दीद वाक़िआ और मुलाहज़ा फ़रमाइए।

" एक साहब जिन्हें नवाब साहब कहा जाता था, मस्जिद में नमाज़ पढ़ने आए और खड़े खड़े बे परवाई से अपनी छड़ी मस्जिद के फ़र्श पर गिरा दी, जिस की आवाज़ हाज़िरीने मस्जिद ने सुनी। आला हज़रत ने फ़रमाया। नवाब साहब मस्जिद में ज़ोर से क़दम रख कर चलना भी मना है, फिर कहां छड़ी को इतने ज़ोर से डालना? नवाब साहब ने मेरे सामने अहद किया कि इन्शाअल्लाह तआला आइन्दा ऐसा नहीं होगा।

शआएरुल्लाह की ताज़ीम व तौक़ीर कुरआनी इस्तेलाह में दिली तक़वा की निशानी है। आइए देखें तो सही कि मुजद्दिद हाज़िरा कुद्देस सिर्रहू मस्जिद का अदब व ऐहतराम कहां तक मलहूज़ रखते थे। अल्लामा ज़फ़रुद्दीन बिहारी अलैहिर्रहमा रक़मतराज़ हैं।

"एक मर्तबा सैयदी इमाम अहमद रज़ा ख़ां मस्जिद में मोतकिफ़ थे। सर्दी का मौसम था और देर से मुसलसल बारिश हो रही थी। हज़रत को नमाज़े इशा के लिए वज़ू करने की फ़िक्र हुई। पानी तो मौजूद था लेकिन बारिश से बचाव की कोई जगह ऐसी न थी जहां वुज़ू कर लिया जाता, क्योंकि मस्जिद में मुस्तामल पानी का एक क़तरा तक गिराना भी जाइज़ नहीं है आख़िर कार मजबूर होकर मस्जिद के अन्दर ही लेहाफ़ और गद्दे की चार तह करके उन पर वुज़ू कर लिया। और एक क़तरा तक फ़र्शे मस्जिद पर गिरने नहीं दिया। सर्दियों की रात, जिस में तूफ़ाने बादोबारां के इज़ाफ़ात, मगर खुद इतनी सर्दी में ठिठुरते हुए रात गुज़ारनी मंज़ूर की लेकिन ऐसी दुशवारी में भी मस्जिद की इतनी सी बे हुर्मती बर्दाशत न की।

क्या इस दर्जा मस्जिद का एहतेराम मलहूज़ रखने वाला कोई शख़्स आप की नज़र से गुज़रा है? आम तौर पर तो यही देखने में आता है कि दीनी तरबीयत गाहों के तलबा और असातज़ा तक बाज़ औक़ात जमाअत में शामिल होने की ख़ातिर, रकअत जाती हुई देख कर भाग दौड़ भी लेते हैं और आज़ाए वज़ू का पोछे बग़ैर मस्जिद के फ़र्श पर चल फिर लेते हैं हालांकि इस तरह मस्जिद की सफ़ें मुस्तामल पानी से गीली

होती हैं, वुज़ू करने के बाद पानी के क़तरे तक मस्जिद में टपकते रहते हैं, जबकि यह उमूर एहतेराम मस्जिद के ख़िलाफ़ हैं। काश ! इमामे अहले सुन्नत के मामूलात से मुसलमान सबक़ हासिल करें।

**नाबालिग़ बहिश्ती** मुअल्लिमीन हज़रात तवज्जोह नहीं फ़रमाते और नाबालिग़ शागिर्दों से बग़ैर उनके वालिदैन की इजाज़त के ख़िदमत लेते रहते हैं। इस सिलसिले में सैयद रज़ा अली साहब का यह बयान मुलाहज़ा फ़रमाइए।

" आला हज़रत की ज़िन्दगी में अहक़र मस्जिद में नमाज़ पढ़ने गया। हज़रत की मस्जिद के कुंए पर एक नाबालिग़ बहिशती (सिक़ा) पानी भर रहा था। मैं ने जब लड़के से वुज़ू के लिए पानी मांगा तो उसने जवाब दिया।" मुझे पानी देने में कोई उज़्र नहीं है लेकिन बड़े मौलवी साहब (यानी आला हज़रत) ने मुझे किसी भी नमाज़ी को पानी देने से मना फ़रमा दिया है और बताया है कि जो वुज़ू के लिए पानी मांगे उससे साफ़ साफ़ कह देना कि मेरे भरे हुए पानी से आप का वुज़ू नहीं होगा। क्योंकि मैं नाबालिग़ हूं।

JANNATI KAUN?

मिफ़्तीए आगरा मौलाना सैयद दीदार अली शाह रहमतुल्लाह अलैहि बानीए हिज़्बुल अहनाफ़ लाहौर के साथ भी ऐसा ही वाक़िआ पेश आया, जब वह पहली या दूसरी दफ़ा बरैली शरीफ़ हाज़िर हुए थे। वाक़िआ यह है:

" मौलवी मुहम्मद हुसैन साहब मेरठी मूजिद तिल समी प्रेस का बयान है कि एक मर्तबा हज़रत मौलाना दीदार अली साहब अलवरी रहमतुल्लाह तआला अलैहि तशरीफ़ लाए, जमाअत का वक़्त था, मस्जिद के कुएं पर एक बहिश्ती का लड़का पानी भर रहा था, जल्दी की वजह से उसी लड़के से पानी तलब फ़रमाया। उसने कहा मौलाना मेरे भरे हुए पानी से आप का वुज़ू जाइज़ नहीं और नहीं दिया। मौलाना को गुस्सा आया और फ़रमाया कि हम जब तुझ से ले रहे हैं तो क्यों जाइज़ नहीं ? उसने कहा मुझे देने का इख़्तियार नहीं, क्योंकि मैं नाबालिग़ हूं। मौलाना को और गुस्सा आया, जमाअत हो रही है और यहां और देर लग रही है। फ़रमाया: आख़िर तू जहां जहां पानी देता है उनका वुज़ू कैसे हो जाता है ? उसने कहा वह लोग तो मुझसे मोल लेते

हैं। और गुस्सा आया मगर उसने नहीं दिया। आख़िर कार ख़ुद भरा और जल्दी जल्दी वुज़ू करके नमाज़ में शरीक हुए। जब गुस्सा कम हुआ और सलाम फेरा तो ख़्याल आया कि वह बहिश्ती का लड़का अज़ रूए फ़िक़्ह सही कहता था। दीदार अली! तुम से तो आला हज़रत के यहां के ख़िदमतगारों के बच्चे भी ज़्यादा इल्म रखते हैं। यह सब आला हज़रत के इत्तिबाए शरीअत का फ़ैज़ है।"

**वालिदा की रज़ा जोईः** इरशादे ख़ुदावन्दी किसे मालूम न होगा कि वालिदैन के सामने उफ़ भी न करो। फ़रमाने मुस्तफ़वी है कि जन्नत तुम्हारी माओं के क़दमों तले है। यानी उनकी ख़िदमत करके जन्नत हासिल कर लो। अमली और ज़बानी मैदान में बड़ा फ़र्क़ है। आइए ज़रा इमाम अहमद रज़ा ख़ां का तर्ज़े अमल देखें। मन्कूल हैः

" हज़रत शाह इस्माईल हसन मियां साहिब का बयान है कि जब मौलाना (आला हज़रत) के वालिद माजिद मौलाना नक़ी अली ख़ां साहिब (अलमुतवफ़्फ़ा १२६७हि. / १८८०ई०) का इन्तिक़ाल हुआ।

आला हज़रत अपने हिस्सए जाइदाद के ख़ुद मालिक थे मगर सब इख़्तियार वालिदा माजिदा के सुपुर्द था, वह पूरी मालिका व मुतसर्रिफ़ा थीं, जिस तरह चाहतीं सर्फ़ करतीं। जब मौलाना को किताबों की ख़रीदारी के लिए किसी ग़ैर मामूली रक़म की ज़रूरत पड़ती तो वालिदा माजिदा की ख़िदमत में दरख़्वास्त करते और अपनी ज़रूरत बताते। वह इजाज़त देतीं और दरख़्वास्त मंज़ूर करतीं तो किताबें मंगवाते।"

**गुरबा परवरीः** इमामे अहले सुन्नत मौलाना अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी अलैहिर्रहमा ख़ान्दानी रईस और साहिबे जाइदाद थे। आप ने यतीमों, बेवाओं, और दीगर ग़ुरबा व मसाकीन के माहवार वज़ीफ़े मुक़र्रर कर रखे थे। साइलों और नादारों के लिए आप का दरवाज़ा हर वक़्त खुला रहता था। दूर दूर तक हाजत मन्दों की हाजत रवाई फ़रमाया करते। मौसमे सरमा के शुरू में हमेशा नादारों में रज़ाइयां तक़सीम करना आप का मामूल था। एक वाक़िआ मुलाहज़ा फ़रमाइए।

" मौसमे सरमा में एक मर्तबा नन्हें मियां साहब (आलाहज़रत के बिरादरे ख़ुर्द, मौलाना मुहम्मद रज़ा ख़ां साहब) कुद्देस सिर्रहू ने आला

हज़रत की ख़िदमत में एक फ़र्द पेश की। आला हज़रत का हमेशा यह मामूल था कि सर्दियों में रज़ाइयां तैयार करवा कर गुरबा में तक़सीम फ़रमाया करते थे। उस वक़्त तक सब रज़ाइयां तक़सीम हो चुकी थीं। एक साहब ने आला हज़रत से रज़ाई की दरख़्वास्त की तो आप ने नन्हें मियां साहिब वाली वही फ़र्द अपने ऊपर से उतार कर उसे इनायत फ़रमा दी।

इसी सिलसिले में एक वाक़िआ मुलाहज़ा फ़रमाइए।

" जनाब ज़काउल्लाह ख़ां साहब का बयान है कि सर्दी का मौसम था, बाद नमाज़े मग़रिब आला हज़रत हस्बे मामूल फाटक में तशरीफ़ लाकर सब लोगों को रूख़सत कर रहे थे ख़ादिम को देखकर फ़रमाया: आप के पास रज़ाई नहीं है? मैं ख़ामोश हो रहा।

उस वक़्त आला हज़रत जो रज़ाई ओढ़े हुए थे वह ख़ादिम को दे कर फ़रमाया इसे ओढ़ लीजिए। ख़ादिम ने बसद अदब क़दम बोसी की सआदत हासिल की और फ़रमाने मुबारक की तामील करते हुए वह रज़ाई ओढ़ ली।

JANNATI KAUN?

इस सिलसिले में मज़ीद एक वाक़िआ पेशे ख़िदमत है जो मज़कूरा बाला वाक़िए के बाद पेश आया।

" इस वाक़िए के दो तीन रोज़ बाद आला हज़रत के लिए नई रज़ाई तैयार होकर आ गई उसे ओढ़ते हुए अभी चन्द ही रोज़ गुज़रे थे कि एक रात मस्जिद में कोई मुसाफ़िर आया जिस ने आला हज़रत से गुज़ारिश की कि मेरे पास ओढ़ने के लिए कुछ नहीं है। आप ने वह नई रज़ाई उस मुसाफ़िर को अता फ़रमा दी।"

इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी कुद्देस सिर्रहू की सख़ावत व गुर्बा परवरी गिर्द व नवाह में मशहूर थी। इस बारे में आप के सवानेह निगार मौलाना बदरूद्दीन अहमद मद्दा ज़िल्लहु यूं रक़मतराज़ हैं।

" काशानए अक़दस से कोई साइल ख़ाली वापस न होता। बेवगान की इमदाद और ज़रूरतमन्दों की हाजत रवाई के लिए आप की जानिब से माहवार रक़में मुक़र्रर थीं और यह इमदाद सिर्फ़ मक़ामी लोगों के लिए ही न थी बल्कि बैर व नजात में बज़रिया मनी आर्डर इमदादी

रक़म रवाना फ़रमाया करते।"

दूर दराज़ की इमदाद के सिलसिले में एक अजीब वाक़िआ पेशे ख़िदमत है।

" एक दफ़ा मदीना तैयबा से एक शख़्स ने पचास रूपये तलब किए इत्तिफ़ाक़ ऐसा हुआ कि आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू के पास उस वक़्त एक रूपया भी नहीं था। आला हज़रत ने बारगाहे रिसालत में इल्तिजा की कि हुज़ूर मैं ने कुछ बन्दगाने ख़ुदा के महीने (माहवार वज़ीफ़े) आप की इनायत के भरोसे पर अपने ज़िम्मे मुक़र्रर कर लिए हैं, अगर कल पचास रूपये का मनी आर्डर कर दिया गया तो बर वक़्त हवाई डाक से पहुंच जाएगा।

यह रात आप ने बड़ी बेचैनी से गुज़ारी। अलस्सुबह एक सेठ साहिब हाज़िरे बारगाह हुए और मौलवी हस्नैन रज़ा ख़ां साहब के ज़रिए मुबल्लिग़ इक्कावन रूपये बतौरे नज़रानए अक़ीदत हाज़िरे ख़िदमत किए। जब मौलवी साहब मौसूफ़ ने इक्कावन रूपये आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू की ख़िदमत में जाकर पेश किए तो आप पर रिक़्क़त तारी हो गई और मज़कूरा बाला ज़रूरत का इन्किशाफ़ फ़रमाया, इरशाद हुआ यह यक़ीनन सरकारी अतीया है। इस लिए कि इक्कावन रूपये के कोई माना नहीं सिवाए इसके कि पचास भेजने के लिए फ़ीस मनी आर्डर भी तो चाहिए। चुनांचे उसी वक़्त मनी आर्डर का फ़ार्म भरा गया और डाक ख़ाना खुलते ही मनी आर्डर रवाना कर दिया गया।

इमाम अहमद रज़ा बरैलवी की सख़ावत का यह सिलसिला हर वक़्त जारी रहता था इधर आया और उधर मसारिफ़े ज़रूरिया और ग़ुर्बा में तक़सीम हो गया। बाज़ औक़ात तो हवाइजे ज़रूरिया के लिए एक पैसा तक पल्ले नहीं रहता था, हालांकि साहबे जाइदाद और ख़ान्दानी रईस थे। सख़ावत की इन्तिहा मालूम करने की ग़र्ज़ से मुजद्दिदे हाज़िरा कुद्देस सिर्रहू के अव्वलीन सवानेह निगार और आप के ख़लीफ़ए अरशद मलेकुल उलमा अल्लामा ज़फ़रूद्दीन बिहारी अलैहिर्रहमा का हैरत अंगेज़ इन्किशाफ़ मुलाहेज़ा हो।

"एक मर्तबा ऐसे ही मौक़ा पर तक़सीम करते हुए फ़रमाया कि कभी मैं ने एक पैसा ज़कात का नहीं दिया। और यह बिल्कुल सही इरशाद फ़रमाया कि हुज़ूर पर ज़कात फ़र्ज़ ही नहीं हुई थी।

ज़कात फ़र्ज़ तो जब हो कि मिक़्दारे निसाब उनके पास साले तमाम तक रहे और यहां तो यह हाल था कि एक तरफ़ से आया, दूसरी तरफ़ गया।

इमाम अहले सुन्नत ने इस अदीमुल मिसाल तरीक़े पर ग़ुर्बा परवरी का काम जारी रखा। जो कुछ हासिल हुआ, उम्र भर यतीमों, बेवाओं, अपाहिजों, मिस्कीनों और नादारों पर लुटाते रहे। हवाइजे ज़रूरिया, ख़िदमत व इशाअते दीन और मेहमान नवाज़ी के बाद जो कुछ था सब ग़रीबों के लिए था। दमे वापसी भी आपने ग़रीबों को फ़रामोश नहीं किया बल्कि फ़ुक़रा के बारे में अपने अज़ीज़ व अक़ारिब को यूं वसीयत फ़रमाते हैं।

" फ़ातिहा के खाने से अग़निया को कुछ न दिया जाए सिर्फ़ फ़ुक़रा को दें और वह भी ऐज़ाज़ और ख़ातिर दारी के साथ, न झिड़क कर। ग़र्ज़ कोई बात ख़िलाफ़े सुन्नत न हो............................अइज़्ज़ा से अगर बतय्यबे ख़ातिर मुमकिन हो तो फ़ातिहा में हफ़्ता में दो तीन बार इन अशिया से भी कुछ भेज दिया करें। दूध का बर्फ़ ख़ाना साज़ अगर चे भैंस के दूध का हो, मुर्ग़ की बिरयानी, मुर्ग़ पुलाव ख़्वाह बकरी का शामी कबाब, पराठे और बालाई, फ़ीरनी, उड़द की फिरेरी दाल मा अदरक व लवाज़िम, गोश्त भरी कचोरियां, सेब का पानी, अनार का पानी, सोडे की बोतल, दूध का बर्फ़, अगर रोज़ाना एक चीज़ हो सके यूं कर दिया करो जैसे मुनासिब जानो, मगर बतैयब ख़ातिर, मेरे लिखने पर मजबूर न हो।

एक वह नाम निहाद मुसलेह, पीर और आलिमे दीन हैं जिन की निगाहें दूसरों की जेबों पर होती हैं और एक आला हज़रत हैं कि उम्र भर ग़रीबों की सरपरस्ती करते रहे और आख़री वक़्त भी अपने घर से इतने लज़ीज़ और बेश क़ीमत ख़ाने ग़रीबों को खिलाते रहने की वसीयत फ़रमा रहे हैं। यह है ग़ुर्बा व मसाकीन से हमदर्दी का हक़ीक़ी जज़्बा और यह है **लन तनालुल बिर्रा हत्ता तुन्फ़िक़ू मिम्मा तुहिब्बूना** पर अमल

करके दिखाना और साथ ही यह ताकीद फ़रमा दी जाती है कि मेरे कहने पर मजबूर न होना बल्कि ग़रीबों का हक़ समझ कर उन्हें खिलाना पिलाना। साथ ही उन्हें हक़ीर समझकर झिड़कना नहीं होगा बल्कि मेहमानों की तरह ख़ातिर दारी और ऐज़ाज़ व इकराम के साथ खिलाना चाहिए।

**जिस को ग़मे जहां में भी याद रहे ग़मे बे कसां**
**मेरी तरफ़ से हमनशीं जाकर उसे सलाम दे**

**इस्लामी मसावातः** मुसलमान सब भाई भाई हैं, सब बराबर हैं। ग़रीब और अमीर में, गोरे और काले में, बादशाह और फ़क़ीर में कोई फ़र्क़ नहीं है। यहां महमूद और अयाज़ बराबर हैं। दुनियावी लिहाज़ से सब यकसां हैं, हां इज़्ज़त व फ़ज़ीलत का मेयार बारी तआला शानहू की नज़र में इन्ना **अकरमकुम इन्दल्लाहे अतक़ाकुम** है। यानी जो ख़ुदा से बहुत ही डरने वाला है। वह अल्लाह तआला के नज़दीक ज़्यादा इज़्ज़त वाला है। इसके बर अक्स गुर्बत व इमारत या अफ़सरी व मातहती के लिहाज़ से ज़िल्लत या इज़्ज़त का मेयार क़ायम करना सरासर ग़लत और लग्व है। शोब व क़बाइल का फ़र्क़ सिर्फ़ पहचान के लिए है और अमीर व ग़रीब, शाह व गदा का इम्तियाज़ कारोबारे जहां की ख़ातिर हिकमते इलाहिया है। एक मज़दूर अगर मुत्तक़ी है तो अल्लाह तआला के नज़दीक फ़ासिक़ हुक्मरान से ज़्यादा इज़्ज़त वाला है। इसी तरह एक नेकोकार ग़रीब व मिस्कीन आदमी उस मालदार से बेहतर है जो बदकार या बेराह रौ हो। जो दौलत, इमारत, उहदा या इल्म की बदौलत ख़ुद को दूसरों पर तरजीह दे अपने आप को औरों से बाला समझे दूसरों को अपने से घटिया जाने वह इस्लामी अख़ूवत व मसावात से ना आशना और मुतकब्बिर है हालांकि इरशादे बारी तआला यूं हैः **ला तुज़क्कू अन्फुसकुम बलिल्लाहु युज़क्की मैंयशाओ** यानी तुम ख़ुद को पाकबाज़ मत ठहराओ जबकि अल्लाह जिसे चाहे पाकबाज़ बनाता है। इस सिलसिले में आला हज़रत का अमल यह था।

"एक साहब.............................ख़िदमत में हाज़िर हुआ करते थे। आला हज़रत भी कभी कभी उनके यहां तशरीफ़ ले जाया करते थे। एक

मर्तबा हुज़ूर उनके यहां तशरीफ़ फ़रमा थे कि उनके मुहल्ले का एक बेचारा ग़रीब मुसलमान टूटी हुई पुरानी चारपाई पर, जो सेहन के किनारे पर पड़ी थी, झिझकते हुए बैठा ही था कि साहबे ख़ाना ने निहायत कड़वे तेवरों से उसकी तरफ़ देखना शुरू किया, यहां तक कि वह नदामत से सर झुकाए उठकर चला गया। हुज़ूर को साहबे ख़ाना की इस मग़रूराना रविश से सख़्त तकलीफ़ पहुंची मगर कुछ फ़रमाया नहीं।

कुछ दिनों के बाद वह हुज़ूर के यहां आए। हुज़ूर ने अपनी चारपाई पर जगह दी वह बैठे ही थे कि इतने में करीम बख़्श हज्जाम, हुज़ूर का ख़त बनाने के लिए आए। वह इस फ़िक्र में थे कि कहां बैठूं। आप ने फ़रमाया भाई करीम बख़्श ! खड़े क्यों हो ? मुसलमान आपस में भाई भाई हैं और उन साहब के बराबर बैठने का इशारा फ़रमाया। वह बैठ गए। फिर तो उन साहब के गुस्सा की यह कैफ़ियत थी कि जैसे सांप फुन्कारें मारता है और फ़ौरन उठकर चले गए, फिर कभी न आए। ख़िलाफ़े मामूल जब अरसा गुज़र गया तो आलाहज़रत ने फ़रमाया कि अब फ़लां साहब तशरीफ़ नहीं लाते हैं। फिर ख़ुद ही फ़रमायाः मैं भी ऐसे मुतकब्बिर और और मग़रूर शख़्स से मिलना नहीं चाहता।

**अहादीस पर यक़ीनः** " यूं तो लाखों उलमा मौजूद हैं जो अहादीस पर कमाले यक़ीन के मुद्दई होंगे लेकिन इमाम अहलेसुन्नत की अपने आक़ा व मौला सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के इरशादाते आलिया पर यक़ीन की शान मुलाहिज़ा हो, ख़ुद फ़रमाते हैंः।

" मेरे पास इन अमलियात के ज़ख़ाइर भरे पड़े हैं लेकिन बिहमदिल्लाह आज तक कभी इस तरफ़ ख़्याल भी न किया, हमेशा उन दुआओं पर जो अहादीस में इरशाद हुई अमल किया, मेरी तो तमाम मुश्किलात इन्हीं से हल होती रहती हैं।

१२६५ हि./१८७८ ई० में जब आप वालिदैन करीमैन के साथ पहली मर्तबा हज्जे बैतुल्लाह और ज़ियारते रौज़ए मुतहहरा के शर्फ़ से मुशरफ़ हुए तो वापसी में बवक़्ते तूफ़ान इसी यक़ीन का अजीब मंज़र सामने आया, चुनांचे फ़रमाते हैं।

"पहली बार की हाज़िरी वालिदैन माजिदैन रहमतुल्लाह तआला अलैहिमा के हमराह रेकाब थी। उस वक़्त मुझे तेईसवां साल था। वापसी में तीन दिन तूफ़ाने शदीद रहा था। उसकी तफ़सील में बहुत तूल है। लोगों ने कफ़न पहन लिए थे। हज़रत वालिदा माजिदा का इज़तिराब देखकर, उनकी तस्कीन के लिए बेसाख़्ता मेरी ज़बान से निकला कि आप इतमीनान रखें, ख़ुदा की क़सम यह जहाज़ न डूबेगा। यह क़सम मैं ने हदीस ही के इतमीनान पर खाई थी, जिस हदीस में कशती पर सवार होते वक़्त ग़र्क़ से हिफ़ाज़त की दुआ इरशाद हुई है, मैं ने वह दुआ पढ़ ली थी, लिहाज़ा हदीस के वादए सादिका पर मुतमईन था। फिर क़सम के निकल जाने से खुद मुझे अन्देशा हुआ और मअन हदीस याद आई **मैंयतअल्ला अलल्लाहे युकज़्ज़िबुहू** हज़रते इज़्ज़त की तरफ़ रूजू की और सरकारे रिसालत से मदद मांगी। अल्हमदुलिल्लाह कि वह मुख़ालिफ़त हवा कि तीन दिन से बशिद्दत चल रही थी दो घड़ी में बिल्कुल मौकूफ़ हो गई और जहाज़ ने नजात पाई।

इसी सिलसिले में एक सबक़ आमोज़ वाक़िआ इमाम अहले सुन्नत के मामूलात से और मुलाहज़ा फ़रमाइए। यह वाक़िआ अल्लामा मलेकुल उलमा ज़फ़रूद्दीन बिहारी अलैहिर्रहमा के सामने पेश आया, नौबत कहां तक पहुंची आला हज़रत के लफ़्ज़ों में मुलाहज़ा फ़रमाइए।

" उसी दिन मसूढ़ों में वरम हो गया और इतना बढ़ा कि हलक़ और मुंह बिल्कुल बन्द हो गया। मुशकिल से थोड़ा दूध हलक़ से उतारता था और उसी पर इकतिफ़ा करता, बात बिल्कुल न कर सकता था, यहां तक कि क़ेराते सरीआ भी मयस्सर न थी। सुन्नतों में भी किसी की इक़तिदा करता। उस वक़्त मज़हबे हन्फ़ी में अदमे जवाज़ क़ेरात ख़ल्फ़ुल इमाम का यह नफ़ीस फ़ायदा मुशाहिदा हुआ। जो कुछ किसी से कहना होता, लिख देता। बुख़ार बहुत शदीद और कान के पीछे गिलटियां।

मेरे मंझले भाई मरहूम (यानी मौलाना हसन रज़ा ख़ां) एक तबीब को लाए, उन दिनों बरैली में मर्ज़े ताऊन बशिद्दत था। उन साहब ने बग़ौर देखकर सात आठ मर्तबा कहा यह वही है, वही है, यानी ताऊन। मैं

बिल्कुल कलाम न कर सकता था, इस लिए उन्हें जवाब न दे सका, हालांकि मैं ख़ूब जानता था कि यह ग़लत कह रहे हैं कि मुझे ताऊन है और न इन्शाअल्लाह हुल अज़ीज़ कभी होगा, इस लिए कि मैं ने ताऊन ज़दा को देखकर बारहा वह दुआ पढ़ ली है जिसे हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया। जो शख़्स किसी बला रसीदा को देखकर यह दुआ पढ़ेगा, उस बला से महफ़ूज़ रहेगा। वह दुआ यह है। **अलहमदुलिल्लाहिल्लज़ी आफ़ानी मिम्मा अबतलाका बिही व फ़ज़्ज़लनी अला कसीरिम मिम्मन ख़लक़ा तफ़ज़ीलन।**

जिन जिन अमराज़ के मरीज़ों, जिन जिन बलाओं के मुब्तलाओं को देखकर मैंने इसे पढ़ा, अल्हमदुलिल्लाह कि आज तक उन सब से महफ़ूज़ हूं और बिऔनिही तआला हमेशा रहूंगा।

अलबत्ता एक बार इसे पढ़ने का मुझे अफ़सोस है। मुझे नौ उम्री में अक्सर आशोबे चश्म हो जाया करता था। बवजहे हिद्दत मिजाज़ बहुत तकलीफ़ देता था। १६ सल की उम्र हो गई और रामपुर जाते हुए एक शख़्स को दर्दे चश्म में मुब्तला देखकर यह दुआ पढ़ी, जब से अब तक आशोबे चश्म फिर नहीं हुआ। उसी ज़माना में सिर्फ़ दो मर्तबा ऐसा हुआ कि एक आंख कुछ दबती मालूम हुई, दो चार दिन बाद वह साफ़ हो गई। दूसरी दबी मगर वह भी साफ़ हो गई मगर दर्द, खटक, सुर्ख़ी कोई तकलीफ़ असलन किसी क़िस्म की नहीं। अफ़सोस इस लिए कि हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से हदीस है। तीन बीमारियों को मकरूह न जानो। जुकाम कि उसकी वजह से बहुत सी बीमारियों की जड़ कट जाती है। खुजली (ख़ारिश) कि उस से अमराज़े जिल्दीया जज़ाम वग़ैरह का इनसिदाद होता है। आशोबे चश्म नाबीनाई को दफ़ा करता है।

अपने आक़ा व मौला सल्लल्लाहु तआला अलैहे वसल्लम के इरशादाते ग्रामी पर इमामे अहले सुन्नत कुद्देस सिर्रहू को किस दर्जा यक़ीन था, इस सिलसिले में बाज़ वाक़ेआत मुलाहज़ा फ़रमाइये, एक ईमान अफ़रोज़ वाक़िआ और पेशे ख़िदमत है।

" जुमादिल ऊला १३०० हिजरी में बाज़ मुहिम तसानीफ़ के सबब एक

महीना बारीक ख़त की किताबें शबाना रोज़ अलल इत्तिसाल देखना हुआ। गर्मी का मौसम था, दिन को अन्दर के दालान में किताब देखता और लिखता। अट्ठाईसवां साल था, आंखों ने अन्धेरे का ख़्याल न किया। एक रोज़ शिद्दते गर्मी के बाइस दोपहर को लिखते लिखते नहाया, सर पर पानी पड़ते ही मालूम हुआ कि कोई चीज़ सर से उतर कर दाहिनी आंख में उतर आई। बायें आंख बन्द करके दाहनी से देखा तो औसत शै मरई में एक सियाह सा हलक़ा नज़र आया, उसके नीचे शै का जितना हिस्सा हुआ वह नासाफ़ और दबा हुआ मालूम होता।

यहां एक डाक्टर उस ज़माना में इलाजे चश्म में बहुत सर बर आवरदा था। सैण्डरसन या अन्डरसन कुछ ऐसा ही नाम था। मेरे उस्ताद जनाब मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर साहिब रहमतुल्लाह अलैहि ने इसरार फ़रमाया कि उसे आंख दिखाई जाए। इलाज करने न करने का इख़्तियार है डाक्टर ने अन्धेरे कमरे में सिर्फ़ आंख पर रौशनी डाल कर आलात से बहुत देर तक बग़ौर देखा और कहा कि कसरते किताब बीनी से कुछ पेवस्त आ गई है, पन्द्रह दिन किताब न देखिए। मुझसे पन्द्रह घड़ी भी किताब न छूट सकी।

हकीम सैयद मौलवी अशफ़ाक़ हुसैन साहब मरहूम सहसवानी डिप्टी कलक्टर तबाबत भी करत थे और फ़क़ीर के मेहरबान थे, फ़रमायाः मुक़द्दमए नुज़ूले आब है बीस बरस बाद (खुदा न करदा) पानी उतर आयेगा। मैं ने इलतिफ़ात न किया और नुज़ूले आब वाले को देखकर वही दुआ पढ़ ली और अपने महबूब सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के इरशादे पाक पर मुतमईन हो गया।

१३१६ हि. में एक और हाज़िक़ तबीब के सामने ज़िक्र हुआ। कहा चार बरस बाद (ख़ुदा नख़्वास्ता) पानी उतर आयेगा। इनका हिसाब डिप्टी साहब के हिसाब से बिल्कुल मुवाफ़िक़ आया। उन्होंने बीस बरस बाद कहे थे, इन्हों ने सोला बरस बाद चार बरस कहे। मुझे महबूब सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के इरशाद पर वह एतमाद न था कि तबीबों के कहने से मुआज़ल्लाह मुतज़लज़ल होता। अल्हम्दुलिल्लाह बीस दर किनार तीस बरस से ज़ायद गुज़र चुके हैं और वह हल्क़ा ज़र्रह भर न

बढ़ा, न बिऔनिही तआला बढ़ेगा न मैं ने कुतुब बीनी में कभी कमी की, न कमी करूं। यह मैं ने इस लिए बयान किया कि यह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के दाइम व बाक़ी मोजिज़ात हैं जो आज तक आंखों से देखे जा रहे हैं और क़यामत तक अहले ईमान मुशाहिदा करेंगे।

**मुसलमान करना:** आम तौर पर यही किया जाता है कि जब कोई ग़ैर मुस्लिम किसी मुसलमान पर अपना इरादा ज़ाहिर करता है कि वह इस्लाम की हक़्क़ानियत का क़ाइल होकर मुसलमान होना चाहता है तो उसे किसी आलिमे दीन के पास ले जाया जाता है, इस में कई घंटे सर्फ़ हो जाते हैं हालांकि जो मुसलमान भी किसी ग़ैर मुस्लिम के ऐसे इरादे पर मुत्तला हो उस पर फ़र्ज़ है कि उसी वक़्त उसे कल्मए शहादत पढ़ा दे और अगर हो सके तो इतना कहलवा दे कि "अल्लाह एक है और इबादत के लायक़ सिर्फ़ उसी की ज़ात है और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम, अल्लाह तआला के सच्चे और आख़री रसूल हैं।" इसके बाद किसी आलिमे दीन के पास ले जाकर ऐलाने आम के साथ मुसलमान करवाए। इमामे अहले सुन्नत की ज़िन्दगी का एक वाक़िआ मुलाहज़ा हो:

" जनाब सैयद अय्यूब अली साहब ही का बयान है कि एक रोज़ एक मुसलमान किसी ग़ैर मुस्लिम को अपने हमराह लाते हैं और अर्ज़ करते हैं कि यह मुसलमान होना चाहते हैं। फ़रमाया कि कलिमा पढ़वा दिया है। उन्होंने कहा कि अभी नहीं। हुज़ूर ने बिला ताख़ीर व तसाहुल......... .................................ग़ैर मुस्लिम को पढ़ने का इशारह करते हुए यह अल्फ़ाज़ तल्क़ीन फ़रमाए **ला इलाहा इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह**। अल्लाह एक है, उसके सिवा कोई माबूद नहीं और मुहम्मद सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम उसके सच्चे रसूल हैं, मैं उनपर ईमान लाया। मेरा दीन मुसलमानों का दीन है। उसके सिवा जितने माबूद हैं सब झूटे हैं। अल्लाह के सिवा किसी की पूजा नहीं है। जिलाने वाला एक अल्लाह है। मारने वाला एक अल्लाह है। पानी बरसाने वाला एक अल्लाह है। रोज़ी देने वाला एक अल्लाह है। सच्चा दीन एक इस्लाम है, और जितने दीन हैं सब झूटे हैं।

इस के बाद मिक़राज़ (कैंची) से सर की चोटी काटी और क़टोरे में पानी मंगवा कर थोड़ा सा ख़ुद पिया बाक़ी उसे दिया और उससे जो बचा वह हाज़िरीन मुसलमानों ने थोड़ा थोड़ा पिया। इस्लामी नाम अब्दुल्लाह रखा गया। बादहू जो साहब लेकर आए थे उन्हें फ़हमाइश की कि जिस वक़्त कोई इस्लाम में आने को कहे, फ़ौरन कलिमा पढ़ा देना चाहिए कि अगर कुछ भी देर की तो गोया उतनी देर उसके कुफ़्र पर रहने की मआज़ल्लाह रज़ा मन्दी है। आप को कलिमा पढ़वा देना चाहिए था, उसके बाद यहां लाते या और कहीं ले जाते। उन साहब ने यह सुनकर दस्त बस्ता अर्ज़ किया कि हुज़ूर! मुझे यह बात मालूम न थी। मैं तौबा करता हूं। हुज़ूर ने फ़रमाया अल्लाह माफ़ करे, कलिमा पढ़ लीजिए। उन्होंने कलिमा पढ़ा और सलाम करके चले गए।

**अख़लाक़े जलाली:** ख़ुद साख़्ता तहज़ीब के अलमबरदार और सुल्हे कुल्लीयत के पुजारियों ने जिस चीज़ का नाम तहज़ीब और अख़लाक़े हसना रखा हुआ है कि ख़ुदा और रसूल (जल्ला जलालहू व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के गुस्ताख़ों और मुसलमानों को एक ही नज़र से देखा जाए, सब के साथ एक जैसा बरताव किया जाए क्योंकि सब मुसलमान हैं और सारे भाई भाई हैं। यह ऐसे हज़रात के नज़दीक ख़्वाह कितना ही क़ाबिले तारीफ़ तर्ज़े अमल हो लेकिन इस्लामी तहज़ीब हरगिज़ नहीं है। क्योंकि यह तरीक़े कार **अल हुब्बु फ़िल्लाहे वल बुग्ज़ु फ़िल्लाहे** के ख़िलाफ़ है। आइए इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी का अख़लाक़ मुलाहज़ा हो।

" आप की ज़ात **अल हब्बु फ़िल्लाहे वल बुग्ज़ु फ़िल्लाहे** की ज़िन्दा तस्वीर थी। अल्लाह व रसूल (जल्ला जलालहू व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) से मोहब्बत रखने वाले को अपना अज़ीज़ समझते और अल्लाह व रसूल (जल्ला जलालहू व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के दुशमन को अपना दुशमन जानते। अपने मुख़ालिफ़ से कभी कज ख़ल्क़ी से पेश न आए। ख़ुश अख़लाक़ी का यह आलम था कि जिस से एक बार कलाम फ़रमाया उसके दिल को गरवीदा बना लिया। कभी दुश्मन से भी सख़्त कलामी न फ़रमाई। हमेशा हिल्म से काम लिया,

लेकिन दीन के दुशमन से कभी नर्मी न बरती। चुनांचे एक दफ़ा हज़रत नन्हें मियां मौलाना मुहम्मद रज़ा ने असर के बाद आप की ख़िदमत में अर्ज़ की कि हैदराबाद दकन से एक राफ़िज़ी सिर्फ़ आप की ज़ियारत के लिए आया है और अभी हाज़िरे ख़िदमत होगा। तालीफ़े क़ल्ब के लिए उस से बात चीत कर लीजिएगा।

दौराने गुफ़्तगू ही में वह राफ़िज़ी भी आ गया। हाज़िरीने मजलिस का बयान है कि आला हज़रत उसकी तरफ़ बिल्कुल मुतवज्जेह न हुए यहां तक कि नन्हें मियां साहब ने उसको कुर्सी पर बैठने का इशारह किया, वह बैठ गया। आला हज़रत के गुफ़्तगू न फ़रमाने से उसको भी कुछ बोलने की जुर्रत न हुई। थोड़ी देर बैठ कर चला गया। उसके जाने के बाद नन्हें मियां ने आला हज़रत को सुनाते हुए कहा कि इतनी दूर से वह सिर्फ़ मुलाक़ात के लिए आया था, अख़लाक़न तवज्जोह फ़रमा लेने में क्या हर्ज था ?

हुज़ूर आला हज़रत ने जलाल की हालत में इरशाद फ़रमाया कि मेरे अकाबिर पेशवाओं ने मुझे यही अख़लाक़ बताया है। फिर आप ने बयान फ़रमाया कि अमीरूल मोमिनीन उमर फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु मस्जिदे नबवी शरीफ़ से तशरीफ़ ला रहे हैं। राह में एक मुसाफ़िर मिलता है और सवाल करता है कि मैं भूका हूं। आप साथ चलने का इशारा फ़रमाते हैं। वह पीछे पीछे काशानए अक़दस तक पहुंचता है। अमीरूल मोमिनीन ख़ादिम को खाना लाने के लिए हुक्म देते हैं। ख़ादिम खाना लाता है और दस्तरख़्वान बिछा कर सामने रखता है। खाना खाने में वह मुसाफ़िर बद मज़हबी के कुछ अल्फ़ाज़ ज़बान से निकालता है। अमीरूल मोमिनीन ख़ादिम को हुक्म फ़रमाते हैं कि खाना उसके सामने से फ़ौरन उठाओ और उसका कान पकड़ कर बाहर कर दो। ख़ादिम उसी दम हुक्म बजा लाता है। ख़ुद हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने मस्जिदे नबवी शरीफ़ से नाम लेकर मुनाफ़िक़ीन को निकलवा दिया **उख़रूज या फ़लानु फ़इन्नका मुनाफ़िकुन।** ऐ फ़लां मस्जिद से निकल जा, इस लिए कि तू मुनाफ़िक़ है।"

**सोने का अन्दाज़:** शराबे मोहब्बत से मख़मूर रहने वालों के तौर तरीक़े दूसरों से कुछ निराले ही होते हैं। आला हज़रत के सोने का तरीक़ा अल्लामा बदरूद्दीन अहमद साहब ने यूं रक़म फ़रमाया है।

" आप के ख़ादिम का बयान है कि आला हज़रत २४ घंटे में सिर्फ़ देढ़ दो घंटे आराम फ़रमाते और बाक़ी तमाम वक़्त तस्नीफ़ व कुतुब बीनी और दीगर ख़िदमाते दीनिया में सर्फ़ फ़रमाते और हमेशा बशक्ले नामे अक़दस मुहम्मद सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम सोया करते। इस तरह कि दोनों हाथ मिला कर सर के नीचे रखते और पांव समेट लेते जिस से सर मीम, कुहनियां, हे, कमर मीम, पांव दाल बन कर गोया नामे पाक मुहम्मद का नक़्शा बन जाता सल्लल्लाहु अलैहि व अला आलिही वसल्लम।

अल्लामा मुहम्मद साबिर नसीम बस्तवी ने इस सिलसिले में यूं वज़ाहत फ़रमाई है।

" जब आप आराम फ़रमाते तो दाहिनी करवट, इस तरह पर कि दोनों हाथ मिला कर सर के नीचे रख लेते और पाए मुबारक समेट लेते। कभी कभी ख़ुद्दाम हाथ पांव दाबने बैठ जाते और अर्ज़ करते। हुज़ूर ! दिन भर काम करते करते थक गए होंगे, ज़रा पाए मुबारक दराज़ फ़रमा लें तो हम दर्द निकाल दें। इसके जवाब में फ़रमाते कि पांव तो क़ब्र के अन्दर फैलेंगे। एक अर्सा तक आप के इस हैयत पर आराम फ़रमाने का मक़सद मालूम नहीं हुआ और न आप से पूछने की कोई हिम्मत ही कर सका।

आख़िर कार इमाम अहले सुन्नत कुद्दूसे सिर्रहू के इस तरह सोने का राज़ आला हज़रत के ख़लफ़े अकबर हुज्जतुल इस्लाम मौलाना हामिद रज़ा ख़ां रहमतुल्लाह अलैहि ने ज़ाहिर फ़रमाया कि सोते वक़्त यह फ़ना फ़िर्रसूल अपने जिस्म को इस तरह तरकीब देकर सोते हैं कि लफ़्ज़े मुहम्मद बन जाता है। अगर इसी हालत में पैग़ामे अजल आ जाए तो ज़हे नसीब वरना दूसरा फ़ायदा तो हासिल, **व हुवा हाज़ा:**

" इस तरह सोने से फ़ायदा यह है कि सत्तर हज़ार फ़रिशते रात भर इस नामे मुबारक के गिर्द दरूद शरीफ़ पढ़ते हैं और वह इस तरह

सोने वाले के नामए आमाल में लिखा जाता है।

सोते वक़्त जब आप दोनों हाथों को मिला कर सर के नीचे रखते तो उंगलियों का अन्दाज़ अजीब होता। अंगूठे को अंगूश्ते शहादत के वस्त पर रखते और बाक़ी उंगलियां अपनी असली हालत पर रहतीं। इस तरह उंगलियों से लफ़्ज़ अल्लाह बन जाता। गोया सोते वक़्त दोनों हाथों की उंगलियों से अल्लाह और जिस्म से मुहम्मद लिख कर सोते। हुज्जतुल इस्लाम मौलाना हामिद रज़ा ख़ां अलैहिर्रहमा ने आप की इन वालिहाना अदाओं के पेशे नज़र ही तो कहा था कि :

**नामे खुदा है हाथ में, नामे नबी है ज़ात में**
**मुहरे गुलामी है पड़ी, लिखे हुए हैं नाम दो**

**चाँदी की कुर्सी:** रियासते रामपुर में इस क़िस्म का वाक़िआ पेश आया था, जो इस तरह मन्कूल है।

"चुनांचे नवाब साहब ने आला हज़रत रज़ियल्लाहु तआला अन्हु को बुलवाया और हुज़ूर अपने खुसर जनाब शैख़ तफ़ज़्ज़ुल हुसैन के हमराह रामपुर तशरीफ़ ले गए। जिस वक़्त आप नवाब के यहां पहुंचे और नवाब साहब ने आप की ज़ियारत की तो बहुत मुतअज्जिब हुए लेकिन आप के इल्मी जाह व जलाल के क़ाइल हो चुके थे इस लिए आप के इन्तिहाई ऐज़ाज़ व इकराम में चाँदी की कुर्सी पेश की। आप ने फ़ौरन इरशाद फ़रमाया कि मर्द के लिए चाँदी का इस्तेमाल हराम है। इस जवाब से नवाब साहब कुछ ख़फ़ीफ़ हुए और आप को अपने पलंग पर जगह दी और आप से ग़ायते लुत्फ़ व मोहब्बत से बातें करने लगे।

नवाब साहब किस तरह आला हज़रत के इल्मी जाह व जलाल के क़ाइल हुए और क्यों आप की ज़ियारत का शौक़ पैदा हुआ ? इस का सबब एक फ़तवा है। उस फ़तवे का वाक़िआ इस तरह मुन्कूल है।

"हज़रत मौलाना नक़ी अली ख़ां साहब का नाम सुन कर एक साहब रामपुर से उनकी ख़िदमत में हाज़िर हुए और मौलाना इरशाद हुसैन साहब मुजद्दिदी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु का फ़तवा पेश किया, जिस पर बहुत से उलमाए किराम की मुहरें और दस्तख़त थे। हज़रत ने फ़रमाया कि कमरे में मौलवी साहब हैं, उनको दे दीजिए जवाब लिख

देंगे वह साहब कमरे में गए और वापस आकर अर्ज़ किया! कमरे में मौलवी साहब नहीं हैं। फ़क्त एक साहबज़ादे हैं। हज़रत ने फ़रमाया उन्हीं को दे दीजिए, वह लिख देंगे। उन्होंने अर्ज़ किया हज़रत! मैं तो आप का शुहरा सुनकर आया हूं आप ने फ़रमाया आजकल वही फ़तवा लिखा करते हैं, उन्हीं को दे दीजिए। बिल आख़िर उन साहब ने आला हज़रत को फ़तवा दे दिया।

हुज़ूर ने जो उस फ़तवा को मुलाहज़ा फ़रमाया तो जवाब दुरूस्त न था। आप ने उस जवाब के ख़िलाफ़ जो बात हक़ थी लिख कर वालिद माजिद साहबे क़िब्ला की ख़िदमत में पेश किया। इन्होंने उसकी तस्दीक़ फ़रमा दी। वह साहब उस फ़तवा को लेकर रामपुर पहुंचे और नवाब रामपुर ने उसे अज़ अव्वल ता आख़िर देखा, तो मुजीबे अव्वल मौलाना इरशाद हुसैन साहब को बुलाया। आप तशरीफ़ लाए तो वह फ़तवा आप की ख़िदमत में पेश किया। मौलाना ने हक़ गोई व सिद्क़ पसंदी का सुबूत देते हुए साफ़ साफ़ इरशाद फ़रमाया कि हक़ीक़त में वही जवाब सही है जो बरैली शरीफ़ से आया है।

नवाब साहब ने कहा। फिर इतने उलमा ने आप के जवाब की तस्दीक़ किस तरह कर दी ? मौलाना ने फ़रमाया कि तस्दीक़ करने वाले हज़रात ने मुझ पर मेरी शोहरत की वजह से ऐतमाद किया वरना हक़ वही है जो उन्हों ने लिखा है। इस वाक़िआ से फिर यह मालूम करके कि आला हज़रत की उम्र उन्नीस बीस साल की है, नवाब साहब मुतहैयर रह गए और उनको आप की मुलाक़ात का शौक़ पैदा हुआ।

यह वाक़िआ हयाते आला हज़रत के सफ़ा १३३ पर भी मुफ़्ती एजाज़ वली ख़ां साहब मरहूम से मन्क़ूल है। लेकिन मालूम नहीं मुफ़्ती साहिब ने किस मसलेहत के तहत उस वक़्त इमाम अहमद रज़ा ख़ां क़ुद्देस सिर्रहू की उम्र का चौदहवां साल बताया हालांकि उस वक़्त आप की उम्र कम अज़ कम उन्नीस बीस साल थी जैसा कि अल्लामा ज़फ़रूद्दीन बिहारी अलैहिर्रहमा ने सफ़ा १३४, १३५ पर तस्रीह फ़रमाई है। यह वाक़िआ आला हज़रत अलैहिर्रहमा की शादी के बाद पेश आया क्योंकि आला हज़रत को उनके ख़ुसर साहब के ज़रिए बुलवाया गया था और

शादी आप की १२६१ हि./ १८८५ ई० में हुई और उस वक़्त आप की उम्र उन्नीस साल थी। चाँदी की कुर्सी पेश करने का मुफ़्ती एजाज़ वली ख़ां साहब ने भी अपने बयान में ज़िक्र किया है।

**दाहिना हाथः** अक्सर हज़रात दाहिने और बायें हाथ के कामों का फ़र्क़ मलहूज़ नहीं रखते। इमामे अहले सुन्नत ने इस बारे में अमली तौर पर मुसलमानों को इनका दायरा कार बताया, चुनांचे इस सिलसिले में मन्कूल है।

" नाक साफ़ करने और इस्तिंजा फ़रमाने के सिवा आप के हर काम की इब्तिदा सीधे ही जानिब से होती थी। चुनांचे अमामा मुबारक का शिमला सीधे शाना पर रहता, उस के पेच सीधी (दायें) जानिब होते और उसकी बन्दिश इस तौर पर होती कि बायें दस्ते मुबारक में बन्दिश और दाहिना दस्ते मुबारक पेशानी पर हर पेच की गिरफ़्त करता था।

इस सिलसिले में अल्लामा बदरूद्दीन अहमद साहब ने आला हज़रत के तर्ज़े अमल की यूं वज़ाहत फ़रमाई है।

" अगर किसी को कोई चीज़ देते और वह बायां हाथ बढ़ाता तो फ़ौरन दस्ते मुबारक रोक लेते और फ़रमाते कि दाहिने हाथ में लो, बायें हाथ में शैतान लेता है। बिस्मिल्लाह शरीफ़ का अदद ७८६ लिखने का आम दस्तूर यह है कि पहले ७ लिखते हैं फिर ८, उसके बाद ६ लिखते हैं लेकिन आप पहले ६ फिर ८ तब ७ तहरीर फ़रमाते यानी आदाद को भी दाहिनी जानिब से लिखते।"

**बाज़ मुबारक आदतेंः** कहना तो बहुत आसान है लेकिन छोटी छोटी बातों के ख़्याल रखना और मुस्तहसन आदात व अतवार का ख़ूगर बनना ख़ुदा के बरगुज़ीदा बन्दों ही से मख़्सूस है। आला हज़रत की बाज़ आदतें मुलाहज़ा हों।

" बशक्ले नामे अक्दस (मुहम्मद) सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम इसतेराहत फ़रमाना, ठट्ठा न लगाना, जमाई आने पर उंगली दातों में दबा लेना और कोई आवाज़ न होना, कुल्ली करते वक़्त दस्ते चप रीश मुबारका पर रख कर, ख़मीदा सर होकर पानी मुंह से गिराना, क़िब्ला की तरफ़ रूख़ करके कभी न थूकना, न क़िब्ला की तरफ़ पाए मुबारक

दराज़ करना, नमाज़े पंजगाना मस्जिद में बाजमाअत अदा करना, फ़र्ज़ नमाज़ बा अमामा पढ़ना,बग़ैर सूफ़ पड़ी दवात से नफ़रत करना, यूंही लोहे के क़लम से इजतिनाब करना, ख़त बनवाते वक़्त अपना कंघा शीशा इस्तेमाल फ़रमाना, मिस्वाक करना, सरे मुबारक में फलील डलवाना।"

**मशाग़िलः** आज तो उलमाए किराम की ज़िन्दगियों में भी रंगीनी पैदा हो गई है। बाज़ तो ऐसे भी हैं जिन्हें दर्स व तदरीस और ख़िताबत के बाद तक़रीर फ़रोशी से इतनी फुर्सत ही नहीं मिलती कि सारी ज़िन्दगी में एक दो किताबें लिख जायें। इमामे अहले सुन्नत के मशाग़िल मुलाहज़ा हों, क्या उन के हां तक़रीर या फ़तवा या तावीज़ फ़रोशी फटकी भी थी? दिन रात उनका मशग़ला तस्नीफ़ व तालीफ़, फ़तवा नवेसी और ख़िदमते दीन था और यह सब कुछ लिवजहिल्लाह था। अल्लामा बदरूद्दीन अहमद ने इमाम अहमद रज़ा खां बरैलवी के मशाग़िल का तज़किरा यूं किया है।

JANNATI KAUN?

"तस्नीफ़ व तालीफ़, कुतुब बीनी, फ़तवा नवेसी और औराद व अशग़ाल के ख़्याल से ख़लवत में तशरीफ़ रखते पांचों नमाज़ों के वक़्त मस्जिद में हाज़िर होते और हमेशा नमाज़ बा जमाअत अदा फ़रमाया करते और बावजूद कि बेहद हार्र मिज़ाज थे मगर कैसी गर्मी क्यों न हो हमेशा अमामा और अंगरखे के साथ नमाज़ पढ़ा करते थे,

ख़ुसूसन फ़र्ज़ तो कभी सिर्फ़ टोपी और कुर्ते के साथ अदा न किया।"

**ग़ेज़ाः** आला हज़रत अज़ीमुल बरकत एक तरफ़ तो हमा वक़्त तस्नीफ़ व तालीफ़ और फ़तवा नेवसी और कुतुब बीनी में मशग़ूल रहते और दूसरी तरफ़ ज़ईफ़ुल जुस्सा थे, यही वजह है कि साहबे हैसियत और रईस होने के बावजूद आप की ख़ूराक महज़ इतनी थी जो सिर्फ़ ज़िन्दा रहने के लिए बमुशकिल काफ़ी हो सके। मसलनः

"आप की ग़ेज़ा निहायत क़लील थी। एक प्याली बकरी के गोश्त का शोरबा बग़ैर मिर्च के और एक या देढ़ बिस्कुट और वह भी रोज़ रोज़ नहीं, बल्कि बसा औक़ात इसमें भी नागा हो जाता था।

अल्लामा ज़फ़रूद्दीन बिहारी रहमतुल्लाह अलैहि ने आप की आम

गे़ज़ा के बारे में यूं वज़ाहत फ़रमाई हैः

"आला हज़रत कुदेस सिर्रहू की आम गे़ज़ा रोटी, चक्की के पिसे हुए आटे और बकरी का क़ोरमा था।

मल्फ़ूज़ाते शरीफ़ से मालूम होता है कि ज़्यादा से ज़्यादा ख़ुराक एक चपाती थी, इसी तरह एक दो बिस्कुट और एक प्याली का शोरबा बराए नाम ख़ूराक ही तो है, इस पर भी नाग़ों का तुर्रह। रमज़ानुल मुबारक के मुक़द्दस महीने की गे़ज़ा मुलाहज़ा होः

" मौलवी मुहम्मद हुसैन साहब मेरठी मूजिद तिल्सिमी प्रेस का बयान है कि...................... आला हज़रत बादे इफ़तार पान नोश फ़रमाते, शाम को खाना खाते मैं ने किसी दिन नहीं देखा। सहर को सिर्फ़ एक छोटे से प्याले में फ़ीरनी और एक प्याली में चटनी आया करती थी, वह नोश फ़रमाया करते। एक दिन मैं ने दरयाफ़्त किया कि हुज़ूर! फ़ीरनी और चटनी का क्या जोड़ ? फ़रमाया, नमक से खाना शुरू करना और नमक पर ख़त्म करना सुन्नत है, इस लिए यह चटनी आती है–"।

**ख़िदमते इस्लाम की धुनः** वह भी उलमाए किराम हैं जिन्हें अपनी हर तस्नीफ़ में कसरते मशाग़िल और बेहद मसरूफ़ियात का तज़किरा करना इस लिए ज़रूरी होता है कि अगर यह रूकावट न होती तो वह मौज़ूए किताब पर तहक़ीक़ात के दरिया बहा देते। तक़रीर के लिए (अगर किराये पर न आये हों) मुख़लेसीन व मुहिब्बीन खींच कर ले आयें तो ख़ुतबा के बाद ही मिसरा यह होगा कि तबीयत इन्तिहाई नासाज़ है महज़ फ़लां इबने फ़लां साहब के पासे ख़ातिर से आना पड़ गया लेकिन एक इमामे अहले सुन्नत की ज़ाते गिरामी है कि जिस्मानी लिहाज़ से नहीफ़ व नातवां, सारी उम्र अमराज़े मुज़म्मना के शिकार रहे, दर्दे गुर्दा चौदह साल की उम्र से लाहिक़, सर दर्द दायमी और बुख़ार तो गोया सफ़र व हज़र में रफ़ीक़े ज़िन्दगी या राहते जान था। इस के बावजूद उस नाबग़ए अस्र की दीनी ख़िदमात का अन्दाज़ा भी लगाना मुशकिल है। सुबूत के तौर पर एक वाक़िआ मुलाहज़ा होः

"मेरे (मौलवी मुहम्मद हुसैन मेरठी के) बरैली क़याम के ज़माना में हज़रत का मावुल ज़ुबन हुआ जिसमें बीस मुसहिल होते हैं, मगर काम

(तस्नीफ़ व तालीफ़ का) बराबर जारी रहा अज़ीज़ों ने यह देखकर मना किया मगर न माने। उन्होंने तबीब साहब से कहा कि मुसहिल के दिन भी बराबर लिखते हैं और क़रीबन बीस मुसहिल होंगे, आंखों को नुक़्सान पहुंचने का अन्देशा है। तबीब साहब ने बहुत समझाया तो यह इरशाद फ़रमाया: अच्छा मुसहिल के दिन मैं खुद नहीं लिखूंगा। दूसरों से लिखवा दिया करूंगा और ग़ैर मुसहिल के दिन मैं खुद लिखूंगा। तबीब साहब ने कहा कि इसको ग़नीमत समझो।

उसका यह इन्तिज़ाम किया गया कि एक मकान में चन्द अलमारियां लगाकर उनमें किताबें रख दी गई। मुसहिल के दिन हज़रत उस मकान में तशरीफ़ ले गए और साथ सिर्फ़ मैं था। दरवाज़ा बन्द कर दिया गया। अब जो फ़तवा लिखाना होता उसका कुछ मज़मून लिखा कर मुझसे फ़रमाते कि अल्मारी में से फ़लां जिल्द निकालो। अक्सर किताबें मिसरी टाइप की कई कई जिल्दों में थीं। मुझ से फ़रमाते इतने सफ़हे लौट लो और फ़लां सफ़हा पर इतनी सतरों के बाद यह मज़मून शुरू हुआ है उसे नक़्ल कर दो। मैं वह फ़िक़रा देख कर पूरा मज़मून लिखता और सख़्त मुतहैयर था कि वह कौन सा वक़्त मिला था कि जिस में सफ़ा और सतरें गिन कर रखे गए थे। ग़र्ज़ ये कि उनका हाफ़िज़ा और दिमाग़ी बातें हम लोगों की समझ से बाहर थीं।

**अपनी ज़ात पर फ़तवा:** इन्सानी फ़ितरत की यह कमज़ोरी है कि वह अपने लिए हर मुमकिन आसानी का मतलाशी रहता है। गुंजाईश और रिआयत का पहलू तलाश करने में कसर उठा नहीं रखता लेकिन अल्लाह तआला के ख़ास बन्दे न सिर्फ़ खुद को अहकामे शरा का पाबन्द ही बनाते हैं बल्कि वह रूख़्सत की जगह अज़ीमत और फ़तवा की जगह तक़्वा इख़्तियार करके मवाखज़े से बचने की हत्तल इमकान कोशिश करते हैं। इमाम अहले सुन्नत की अज़ीमत का हैरत अंगेज़ वाक़िआ मुलाहज़ा फ़रमाइए।

" जब १३३६ हि. का माहे रमज़ान शरीफ़, मई जून १९२१ ई० में पड़ा और मुसलसल अलालत व ज़ोफ़े फ़रावां के बाइस आला हज़रत ने अपने अन्दर इमसाल के मौसमे गर्मा में रोज़ा रखने की ताक़त न पाई

तो अपने हक़ में फ़तवा दिया कि पहाड़ पर सर्दी होती है, वहां रोज़ा रखना मुमकिन है, लिहाज़ा रोज़ा रखने के लिए वहां जाना इस्तिताअत की वजह से फ़र्ज़ हो गया फिर आप रोज़ा रखने के इरादे से कोहे भवाली ज़िला नैनिताल तशरीफ़ ले गए।"

**दुनिया से बे रग़बती:** एक वह हज़रात हैं जो मुसलमानों के पेशवा कहलाने के मुद्दई हैं, लेकिन दुनिया कमाने की ख़ातिर बाज़ ब्रिटिश गवर्नमेंट के ऐवाने हुकूमत के सामने सज्दा रेज़ रहे तो दूसरे गांधवी बुत ख़ाने पर, लेकिन इमाम अहले सुन्नत के ख़ुलूस व लिल्लाहियत का अन्दाज़ा वह सईद हस्तियां कर सकती हैं जो ख़ुद इन सिफ़ात से मुत्तसिफ़ हों। चुनांचे सैफुल इस्लाम देहलवी ने आला हज़रत अलैहिर्रहमा के बारे में लिखा है:।

" मैं ने सौदागरी मुहल्ले के कई बुजुर्गों से सुना कि निज़ाम हैदराबाद दकन ने कई बार लिखा कि हुज़ूर कभी मेरे यहां तशरीफ़ लाकर मम्नून फ़रमायें या मुझे ही न्याज़ का मौक़ा इनायत फ़रमायें तो आप (आला हज़रत) ने जवाब दिया कि मेरे पास अल्लाह तआला का इनायत फ़रमाया हुआ वक़्त सिर्फ़ उसी की इताअत के लिए है मैं आप की आओ भगत का वक़्त कहां से लाऊं ?"

आला हज़रत तो फिर आलाहज़रत हैं, आपके ख़लफ़े अकबर हज़रत हज्जतुल इस्लाम के बारे में मौसूफ़ ने यूं वज़ाहत फ़रमाई है।

" उनके साहबज़ादे मौलाना हामिद रज़ा ख़ां रहमतुल्लाह अलैह जिन से मुझको चन्द दिन फ़ैज़ हासिल करने का मौक़ा मिला, बड़े हसीन व जमील, बड़े आलिम और बे इन्तिहा ख़ुश अख़लाक़ थे। उनकी ख़िदमत में भी निज़ाम हैदराबाद ने दारूल इफ़्ता की निज़ामत की दरख़्वास्त की और इस सिलसिला में काफ़ी दौलत का लालच दिलाया, तो आप ने फ़रमाया कि मैं जिस दरवाज़ए ख़ुदाए करीम का फ़क़ीर हूं, मेरे लिए वही काफ़ी है।"

इसी क़िस्म का वाक़िआ नवाब रामपुर के साथ पेश आया, चुनांचे अल्लामा बिहारी मरहूम ने लिखा है कि:

" एक मर्तबा नवाब रामपुर नैनिताल जा रहे थे। स्पेशल बरैली शरीफ़

पहुंचे तो हज़रत शाह मेहदी हसन मियां साहब ने अपने नाम से डेढ़ हज़ार के नोट रियासत के मदारूल मुहाम की मारिफ़त बतौरे नज़्र स्टेशन से हुज़ूर की ख़िदमत में भेजे और वालिए रियासत की जानिब से मुस्तदई होते हैं कि मुलाक़ात का मौक़ा दिया जाए। हुज़ूर को मदारूल मुहाम साहब के आने की ख़बर हुई तो अन्दर से दरवाज़ा की चौखट पर खड़े खड़े मदारूल मुहाम साहब ने फ़रमाया कि मियां को मेरा सलाम अर्ज़ कीजिएगा और यह कहिएगा, यह उल्टी नज़्र कैसी ? मुझे मियां की ख़िदमत में नज़्र पेश करना चाहिए न कि मियां मुझे नज़्र दें। यह डेढ़ हज़ार हों या जितने हों, वापस ले जाइए, फ़क़ीर का मकान न इस क़ाबिल कि किसी वालिए रियासत को बुला सकूं और न मैं वालियाने रियासत के आदाब से वाक़िफ़ कि ख़ुद जा सकूं।

जनाब सैफ़ुल इस्लाम ने इस सिलसिले में एक वाक़िआ और नक़्ल किया है जो यह है:

"नवाब हामिद अली ख़ां साहब मरहूम के मुताल्लिक़ मालूम हुआ कि कई बार उन्होंने आला हज़रत को लिखा कि हुज़ूर रामपुर तशरीफ़ लायें तो मैं बहुत ही ख़ुश हूंगा। अगर यह मुमकिन न हो तो मुझी को ज़ियारत का मौक़ा दीजिए। आप ने जवाब में फ़रमाया कि चूंकि आप सहाबए किबार रिज़वान अलैहिम अजमईन के मुख़ालिफ़ शीओं के तरफ़दार और उनकी ताज़िया दारी और मातम वग़ैरह की बिदअत में मुआविन हैं, लिहाज़ा मैं न आप को देखना जाइज़ समझता हूं न अपनी सूरत दिखाना ही पसंद करता हूं।"

**अहले मुहल्ला पर असरः** बाज़ हज़रात वह भी हैं जो आसमाने इल्म के नय्यरे ताबां होने के मुदई हैं लेकिन माहौल तो दरकिनार ख़ुद उनके घर वाले ग़ैर इस्लामी रंग में रंगे हुए नज़र आते हैं। इमाम अहले सुन्नत चूंकि सुन्नत के ज़बर्दस्त पैरूकार थे और दूसरे मुसलमानों को भी इसी रंग में रंगा हुआ देखना चाहते थे। आला हज़रत के मुहल्ले का रंग मुलाहज़ा हो:

" एक अलामत तो उन की बुज़ुर्गी की यह बहुत ही रौशन थी कि मैं (मुनव्वर हुसैन सैफ़ुल इस्लाम साहब) ग़ालिबन सात बरस मुतवातिर

आला हज़रत के मुहल्ला में रहा मगर कहीं से मुझको बाजे गाजे और शबे बरात वग़ैरह के दिन पटाख़ों की आवाज़ नहीं आई, न मैं ने कभी आठ नौ साल की बच्ची को बे पर्दा देखा। मुहल्ला में ऐसा मालूम होता कि सब रहने वाले मुत्तक़ी और निहायत ही पाबन्दे शरा हैं।

छोटे छोटे बच्चों से माँ बहन की गाली नहीं सुनी। जब बच्चे कभी एक दूसरे से लड़ते तो हाथा पाई भी न करते, न गालियां ही देते, हां उनकी बड़ी से बड़ी गाली बेदीन, बद अक़ीदा, वहाबी, चकड़ालवी, देवबन्दी, ग़ैर मुक़ल्लिद, नेचरी और नदवी वग़ैरह थी। शादी ब्याह, बच्चों की पैदाइश या खुशी के मौक़ा पर भी घरों से लड़कियों या औरतों के गाने, ढोलक बजाने तक की आवाज़ नहीं सुनी। इसी तरह मौत के मौक़ा पर भी मुहल्ले की औरतें उतनी ही आवाज़ से रोती होंगी जो दरवाज़े के बाहर न जा सके। ग़र्ज़ यह है कि सौदागरी मुहल्ले में किसी घर की शादी ग़मी की ख़बर लोगों की इत्तला देने पर ही होती थी। आतिश बाज़ी और ताश या दूसरे बेहूदा मशग़ले भी सौदागरी मुहल्ला में, मैंने नहीं देखे।"

**निगाहे वली में वह तासीर देखी**
**बदलती हज़ारों की तक़दीर देखी**

**सलाम का जवाब:** आज कल तो सलाम करने और जवाब देने में कितनी ही जिद्दतें पैदा हो चुकी हैं जिन का रात दिन मुशाहिदए आम हो रहा है। नुमाइशी और फ़र्शी सलाम का भी ख़ूब ज़ोर है लेकिन चूंकि तज़किरा इमाम अहले सुन्नत का है लिहाज़ा यहां मस्नून सलाम के बारे में आप के बचपन का एक वाक़िआ पेश किया जाता है।

"एक रोज़ मौलवी साहब मौसूफ़ हस्बे मामूल बच्चों को पढ़ा रहे थे कि एक बच्चे ने सलाम किया, मोलवी साहिब ने जवाब दिया:" जीते रहो। इस पर हुज़ूर (आला हज़रत) ने अर्ज़ किया कि यह तो सलाम का जवाब न हुआ, व अलैकुमुस्सलाम कहना चाहिए था। मौलवी साहिब सुन कर बहुत खुश हुए और बहुत दुआयें दीं।"

**अहवत का इख़्तियार करना:** शुरू अय्याम में आला हज़रत अलैहिर्रहमा को अक्सर आशोबे चश्म की शिकायत हो जाया करती थी। ऐसी हालत में जो पानी आंखों से बहता है वह ज़ाहिर मज़हब में क़तअन नाक़िसे

वुज़ू नहीं है लेकिन बाज़ फुक़हा ने चूंकि इस का एक गोना बर अक्स भी लिखा है, अगरचे वह दलाइल के ऐतबार से क़ाबिले तस्लीम नहीं और हमारे अइम्मा का फ़तवा भी यही है लेकिन तक़वा का मक़ाम चूंकि फ़तवा से भी आगे है, लिहाज़ा इस सिलसिले में मुजद्दिद हाज़िरा अलैहिर्रहमा का अपना अमल मुलाहज़ा हो:

" एक बार आप की आंखें दुखने आ गई थीं। इस हाल में मस्जिद की हाज़री के वक़्त मुतअद्दिद बार ऐसा होता कि कभी नमाज़ से क़ब्ल और कभी नमाज़ के बाद किसी शख़्स को अपने क़रीब बुलाकर फ़रमाते। देखिए तो आंख के हल्क़ा से बाहर पानी तो नहीं आया है वरना वुज़ू करके नमाज़ दुहरानी पड़ेगी।"

**आख़री तहरीर:** शाने खुदावन्दी और नामूसे मुस्तफ़वी के इस निगहबान की आख़री तहरीर हम्दे इलाही व दरूद पाक है। चुनांचे अल्लामा बदरूद्दीन अहमद ने इमामे अहले सुन्नत के बारे में यूं वज़ाहत फ़रमाई है:

JANNATI KAUN?

"आप ने २५/ सफ़र १३४० हि. जुमा मुबारका को विसाल से दो घंटा सत्तरह मिनट पेशतर तजहीज़ व तकफ़ीन वग़ैरह से मुताल्लिक़ ज़रूरी वसाया, जो चौदह अहम बातों पर मुशतमिल है, क़लमबन्द कराए और आख़िर में बारह बजकर इक्कीस मिनट पर खुद दस्ते अक़दस से हम्द व दरूद शरीफ़ के मन्दर्जा ज़ैल कलेमात तहरीर फ़रमाए। **वल्लाहु शहीदुन वलहुल हम्दु व सल्लल्लाहु तआला व बारिक व सल्लिम अला शफ़ीउल मुजनबीन व आलिहित्तैयबीन व सहबिहिल मुकर्रमीन व इब्निही व हिज़बिही इलल अबदिल आबिदीन आमीन वल हम्दुलिल्लाहे रब्बिल आलमीन।**"

**असली और जाली हनफ़ी की पहचान:** बुज़ुर्गाने दीन ने अपने अपने दौर में उन ज़मानों की मख़्सूस गुमराहियों के पेशे नज़र, कलिमा गोयों में से अहले हक़ व अहले बातिल में तमीज़ करने के मुख़्तलिफ़ तरीक़े बताए। ज़मानए हाल के मुब्तदेईन में से अक्सर तो उनके मख़्सूस अक़ाइद व नज़रियात और अक़वाल व अफ़आल की वजह से पहचान

लिए जाते हैं लेकिन जाली हंफ़ियों का जाल इतना पुर फ़रेब और ग़ैर महसूस है कि अवामुन्नास उसको समझने से क़ासिर होकर रह गए हैं और यही वजह है कि उनके ज़ाहिरी तक़द्दुस, दीन के नाम से भाग दौड़, दावए हन्फ़ीयत, अहनाफ़ की मुसल्लमा किताबों से इस्तिनाद, अहले सुन्नत के अकाबिर की बुज़ुर्गी को मुसल्लम रखने और पीरी मुरीदी तक के न सिर्फ़ क़ाइल बल्कि इस पर आमिल नज़र आने की बिना पर अवाम यह सोचने पर मजबूर हो जाते हैं कि आख़िर यह हन्फ़ी क्यों नहीं और इन के अहले सुन्नत व जमाअत में होने से क्या चीज़ माने है? लेकिन उन बेचारों को क्या मालूम कि इतने क़रीब होकर मुसलमानों के दीन व ईमान को बरबाद करने का यह कारोबार कितना पुर फ़रेब है? इस्लाम की असल बुनियाद अक़ाइद पर है और अक़ाइद में तौहीद व रिसालत के सही तसव्वुरात को मर्कज़ी पोज़ीशन हासिल है लेकिन इन हज़रात ने तौहीद व रिसालत की हुदूद ऐसी मुतअय्यन की हैं जो इस्लाम के बताए हुए तसव्वुरात से कोई मुताबिक़त नहीं रखतीं। यही वजह है कि इन बांके मुवहहिदों को सारी उम्मते मुहम्मदिया शिर्क के समुन्द्र में डूबी हुई नज़र आती है। इन की तौहीद ज़ुल ख़ुवैसरा, ख़वारिज, दाऊद ज़ाहिरी, इबने हज़्म, इबने तैमिया, मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नज्दी और इस्माईल देहलवी की बताई हुई बल्कि गढ़ी हुई तौहीद तो हो सकती है लेकिन इस्लामी तौहीद हरगिज़ नहीं हो सकती। इन मुवहहिदों की पहचान का उलमाए अहले सुन्नत ने आसान तरीन तरीक़ा बताया है जो हस्बे ज़ैल है।

" जब हज़रत मौलाना (अल्लामा क़ादिर बख़्श सहसरामी मरहूम) बैठे तो किसी ने पूछा कि हज़रत! सुन्नी और वहाबी की क्या पहचान है ? ऐसी बात बताइए जिस के ज़रिए हम लोग भी सुन्नी और वहाबी को पहचान सकें। कोई बड़ी इल्मी बात न हो। मौलाना सहसरामी ने फ़रमाया कि ऐसा आसान, उमदा और खरा क़ायदा आप लोगों को बता देता हूं कि उस से अच्छा मिलना मुशकिल है। आप लोग जब किसी के बारे में मालूम करना चाहें कि सुन्नी है या वहाबी? तो उसके सामने

आला हज़रत शाह अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी का तज़किरा छेड़ दीजिए और उसके चेहरे को बग़ौर देखिए, अगर चहरे पर बशाशत और ख़ुशी के आसार दिखाई पड़ें तो समझ लीजिए सुन्नी है और अगर चेहरे पर पज़मुर्दगी और कदूरत देखिए तो समझ लीजिए कि वहाबी है। और अगर वहाबी नहीं जब भी उस में किसी क़िस्म की बेदीनी ज़रूर है।"१

यह क्यों न हो? जबकि मुजद्दिद की आमद का मक़सद ही दीन में ताज़गी पैदा करना और हक़ व बातिल को वाज़ेह कर देना है।

**उसी ने दीन की तजदीद का झण्डा उठाया था**
**निशां हक़्क़ानियत का जिस को मालिक ने बनाया था**

अगर चौथी शिक़ का मुलाहज़ा किया जाए कि इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरैलवी को महबूब के दुशमनों, गुस्ताख़ों और मुब्तदेईने ज़माना से कितनी नफ़रत थी तो इसका वाज़ेह सुबूत आप का तजदीदी कारनामा है। अगर सरवरे कौनो मकां सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के गुस्ताख़ों और आप के लाए हुए दीन में कतर ब्योंत करके गुमराहियों का बीज बोने वालों से आप किसी क़िस्म की रिआयत के रवादार होते तो आप के मुतल्लिक़ मुब्तदेईन की सफ़ों में यह तूफ़ाने बद तमीज़ी क्यों पाया जाता जो आज भी पूरी शिद्दत से तलातुम ख़ेज़ है। आप ने मुक़द्दस शजरे इस्लाम में ग़ैर इस्लामी अक़ायद व नज़रियात की पेवन्द कारी करने वालों को टोका, समझाया बुझाया, ख़ौफ़े ख़ुदा व ख़तरए रोज़े जज़ा याद दिलाया, जब वह किसी तरह बाज़ न आए तो तने तन्हा सबका मुहासबा किया, तक़रीर व तहरीर के हर मैदान में उन्हें ललकारा, हर मक़ाम पर उन्हें साकित व मबहूत किया, बातिल को मग़लूब और हक़ को ग़ालिब कर दिखाया और चिराग़े मुस्तफ़वी को अपनी फूंकों से बुझाने की ख़ातिर जिस रंग में भी बूलहबी आई आप ने उसके परखच्चे उड़ा कर रख दिए। अल्लामा बदरुद्दीन अहमद लिखते हैं।

" आज दुनिया में मुशरिकीन व कुफ़्फ़ार, मुरतदीने अशरार, गुमराहाने फुज्जार का कोई एक भी ऐसा फ़िर्क़ा नहीं है जिसके रद में आला हज़रत की मुतअद्दिद तस्नीफ़ात न हों............................ बद मज़हबों की

जिस क़दर फ़ितनागर पार्टियां हैं उन सब के ख़ुद साख़्ता उसूल और बातिल ऐतक़ादात को उन्हीं के मुसल्लमात उन्हीं के गाड़े हुए क़वाइद से, इस तरह तोड़ फ़ोड़ कर उनके धुवें उड़ा दिए हैं कि तलाश व जुस्तजू के बाद उनका कोई एक ज़र्रह सलामत नहीं मिलता।"

महबूबे परवरदिगार सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की शान में जिन लोगों ने आलिमाने दीन का लिबादा ओढ़ कर ऐसे ऐसे गुज़रे और ना-ज़ेबा अल्फ़ाज़ इस्तेमाल किए जिन की कभी खुले काफ़िरों, ग़ैर मुस्लिमों को भी जुरअत नहीं हुई थी तो इस अलमबरदारे शाने मुस्तफ़वी ने अज़ राहे ख़ैर ख़्वाही मुसलमानों को यूं समझाया और इन लफ़्ज़ों में उन उलमा के शर से बचने की तलक़ीन की:

"लिल्लाह इन्साफ़, अगर कोई तुम्हारे माँ बाप उस्ताद पीर को गालियां दे और न सिर्फ़ ज़बानी बल्कि लिख लिख कर छापे, शाया करे, क्या तुम उसका साथ दोगे? या उसकी बात बनाने को तावीलें गढ़ोगे? या उसके बकने से बे परवाही करके उस से बदस्तूर साफ़ रहोगे? नहीं नहीं, अगर तुम में ईमानी ग़ैरत, इन्सानी हमीयत, माँ बाप की इज़्ज़त हुर्मत अज़मत मोहब्बत का नाम निशान भी लगा रह गया है तो उस बद गो, दुशनामी की सूरत से नफ़रत करोगे, उसके साया से दूर भागोगे, उसका नाम सुन कर ग़ैज़ लाओगे, जो उस के लिए बनावटें गढ़े उसके भी दुशमन हो जाओगे।

फिर ख़ुदा के लिए माँ बाप को एक पल्ले में रखो और अल्लाह वाहिद क़हहार व मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की इज़्ज़त व अज़मत को दूसरे पल्ले में। अगर मुसलमान हो, तो माँ बाप की इज़्ज़त को अल्लाह व रसूल की इज़्ज़त से कुछ निस्बत न मानोगे। माँ बाप की मोहब्बत व हिमायत को अल्लाह व रसूल की मोहब्बत व ख़िदमत के आगे नाचीज़ जानोगे। तो वाजिब वाजिब वाजिब, लाख लाख वाजिब से बढ़कर वाजिब कि उनके बद-गो से वह नफ़रत दूरी व ग़ैज़ जुदाई हो कि माँ बाप के दुशनाम दहिन्दा के साथ उसका हज़ारवां

हिस्सा न हो।"

इस ख़ैर ख़्वाहे इस्लाम व मुसलिमीन ने भोले भाले मुसलमानों को उन लोगों के शर से बचने, उन उलमा से दूर व नुफ़ूर रहने की इन लफ़्ज़ों में तलक़ीन फ़रमाई जो अल्लाह और रसूल की जनाब में गुस्ताख़ थे।

अभी कुरआन व हदीस इरशाद फ़रमा चुके कि ईमान के हक़ीक़ी व वाक़ई होने को दो बातें ज़रूर हैं। मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ताज़ीम, मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की मोहब्बत को तमाम जहान पर तक़दीम। तो उसकी आज़माईश का यह सरीह तरीक़ा है कि तुम को जिन लोगों से कैसी ही ताज़ीम, कितनी ही अक़ीदत, कितनी ही दोस्ती, कैसी ही मोहब्बत का इलाक़ा हो, जैसे तुम्हारे बाप, तुम्हारे उस्ताद, तुम्हारे पीर, तुम्हारी औलाद, तुम्हारे भाई, तुम्हारे अहबाब, तुम्हारे बड़े, तुम्हारे अस्हाब, तुम्हारे मौलवी, तुम्हारे हाफ़िज़, तुम्हारे मुफ़्ती, तुम्हारे वाइज़ वग़ैरह वग़ैरह कसे बाशद, जब वह मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की शाने अक़दस में गुस्ताख़ी करे असलन तुम्हारे क़ल्ब में उन की अज़मत, उनकी मोहब्बत का नाम व निशान न रहे। फ़ौरन उन से अलग हो जाओ, दूध से मख्खी निकाल कर फेंक दो। उनकी सूरत, उनके नाम से नफ़रत खाओ, फिर न तुम अपने रिशते इलाक़े, दोस्ती, उल्फ़त का पास करो, न उनकी मौलवीयत मशीख़त बुज़ुर्गी फ़ज़ीलत को ख़तरे में लाओ कि आख़िर यह जो कुछ था, मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ही की गुलामी की बिना पर था, जब यह शख़्स उन्हीं की शान में गुस्ताख़ हुआ, फिर हमें उस से क्या इलाक़ा रहा ?

उसके जुब्बे अमामे पर क्या जायें ? क्या बहुतेरे यहूदी जुब्बे नहीं पहनते, अमामे नहीं बांधते ? उसके नाम के इल्म व ज़ाहिरी फ़ज़्ल को लेकर क्या करें? क्या बहुत पादरी, बकसरत फ़लसफ़ी बड़े बड़े उलूम

व फुनून नहीं जानते? और अगर यह नहीं बल्कि मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के मुक़ाबिल तुम ने उस की बात बनानी चाही, उसने हुज़ूर से गुस्ताख़ी की और तुम ने उस से दोस्ती निबाही, या उसे हर बुरे से बद तर बुरा न जाना, या उसे बुरा कहने पर बुरा माना, या इसी क़द्र कि तुम ने इस अम्र में बे परवाई मनाई या तुम्हारे दिल में उसकी तरफ़ से सख़्त नफ़रत न आई, तो लिल्लाह, अब तुम्हीं इन्साफ़ कर लो कि तुम ईमान के इम्तिहान में कहां पास हुए? कुरआन व हदीस ने जिस पर हुसूले ईमान का मदार रखा था उस से कितनी दूर निकल गए? मुसलमानो! क्या जिस के दिल में मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ताज़ीम होगी वह उनके बद गो की वक़अत कर सकेगा? अगरचे उसका पीर या उस्ताद ही क्यों न हो। क्या जिसे मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम तमाम जहान से ज़्यादा प्यारे होंगे वह उनके गुस्ताख़ से फ़ौरन सख़्त शदीद नफ़रत न करेगा, अगरचे उसका दोस्त या बिरादर या पिसर ही क्यों न हो।"

कुरआनी आयात पेश करके, ख़ुदा व रसूल (जल्ला जलालहू व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की अज़मत का तसव्वुर दिलाकर, ईमान के तक़ाज़े समझा कर, गुस्ताख़ों के बारे में मुसलमानों से मज़ीद यूं फ़हमाईश की जाती है।

" इस आयते करीमा में साफ़ फ़रमा दिया कि जो अल्लाह या रसूल की जनाब में गुस्ताख़ी करे, मुसलमान उस से दोस्ती न करेगा, जिस का सरीह मफ़ाद हुआ कि जो उस से दोस्ती करे वह मुसलमान न होगा। फिर इस हुक्म का क़तअन आम होना बित्तसरीह इरशाद फ़रमाया कि बाप बेटे भाई अज़ीज़ सब को गिनाया यानी कोई कैसा ही तुम्हारे ज़अम में मुअज़्ज़म या कैसा ही तुम्हें बित्तबा महबूब हो, ईमान है तो गुस्ताख़ी के बाद उस से मोहब्बत नहीं रख सकते, उसकी वक़अत नहीं मान सकते, वरना मुसलमान न रहोगे।"

इमाम अहले सुन्नत, मुजद्दिदे दीन व मिल्लत की आख़री महफ़िल है। सफ़रे आख़िरत की तैयारी हो रही है। अक़ीदतमंद मुल्क के कोने कोने से अयादत के लिए पहुंच रहे हैं इस मौक़ा पर भी मुसलमानों को **ज़ियाबुन फ़ी सियाबिन** का बहरूप भरने वालों, रहबरों के रूप में मुसलमानों को गुमराह करने वालों से यूं आख़री बार ख़बरदार किया जाता है।

" ये लोगो! तुम प्यारे मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की भोली भेड़े हो, और भेड़िये तुम्हारे चारों तरफ़ हैं। वह चाहते हैं कि तुम्हें बहकायें, तुम्हें फ़ितना में डाल दें, तुम्हें अपने साथ जहन्नम में ले जायें। उन से बचो और दूर भागो। देवबन्दी, राफ़िज़ी, नेचरी, क़ादियानी, चकड़ालवी, यह सब फ़िर्क़े भेड़िये हैं, तुम्हारे ईमान की ताक में हैं, इन के हमलों से ईमान को बचाओ। हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम रब्बुल इज़्ज़त जल्ला जलालहू के नूर हैं, हुज़ूर से सहाबए किराम रौशन हुए, सहाबा किराम से ताबईने इज़ाम रौशन हुए, ताबईन से तबा ताबई रौशन हुए, उनसे अइम्मए मुजतहिदीन रौशन हुए, उन से हम रौशन हुए। अब हम तुम से कहते हैं, यह नूर हम से ले लो। हमें इस की ज़रूरत है, कि तुम हम से रौशन हो। वह नूर यह है कि अल्लाह व रसूल की सच्ची मोहब्बत, उनकी ताज़ीम और उनके दोस्तों की ख़िदमत और उनकी तकरीम और उनके दुशमनों से सच्ची अदावत जिस से अल्लाह व रसूल की शान में अदना तौहीन पाओ, फिर वह तुम्हारा कैसा ही प्यारा क्यों न हो, फ़ौरन उस से जुदा हो जाओ, जिस को बारगाहे रिसालत में ज़रा भी गुस्ताख़ देखो, फिर वह तुम्हारा कैसा ही बुज़ुर्ग मुअज़्ज़म क्यों न हो अपने अन्दर से उसे दूध से मख्खी की तरह निकाल कर फेंक दो।

मैं पौने चौदह बरस की उम्र से यही बताता रहा और इस वक़्त फिर यही अर्ज़ करता हूं, अल्लाह तआला ज़रूर अपने दीन की हिमायत के लिए किसी बन्दे को खड़ा कर देगा मगर नहीं मालूम मेरे बाद जो आए कैसा हो और तुम्हें क्या बताये ? इस लिए इन बातों को ख़ूब सुन लो,

हुज्जतुल्लाह काइम हो चुकी। अब मैं क़ब्र से उठ कर तुम्हारे पास बताने न आऊंगा। जिसने इसे सुना और माना, क़यामत के दिन उसके लिए नूर व नजात है और जिस ने न माना, उसके लिए ज़ुल्मत व हलाकत है।"

महबूबे परवरदिगार, आक़ाए नामदार, शफ़ीउल मुज़न्नबीन, रहमतुल लिलआलमीन सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की शान व अज़्मत का यह मुहाफ़िज़, यह दरे अक़्दस का सच्चा दरबान, अपने आक़ा व मौला सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ग़ुलामी पर इतना नाज़ां था कि इस दर की ग़ुलामी पर तख़्ते जम और दीहीमे क़ैसर को निसार कर रहा था, इस ग़ुलामी को वह किसी बड़े से बड़े दुनियावी ऐज़ाज़ के बदले छोड़ने पर रज़ा मन्द नहीं था। इस दर की ग़ुलामी तो बड़ी बात है वह महबूब के दीवार के साये में खड़ा होना और दरे अक़्दस की ख़ाक को ताज व तख़्त से हज़ार दर्जा बेहतर समझता और अपने ख़ालिक़ व मालिक की बारगाह में यूं दुआयें मांगता था।

सायए दीवार व ख़ाके दर हो या रब और रज़ा
ख़्वाहिशे दीहीमे क़ैसर, शौक़े तख़्ते जम नहीं